# आन्तरिक उल्लास का विकास

– श्रीराम शर्मा आचार्य

॥ वन्दे वेद मातरम् ॥

# आंतरिक उल्लास का विकास

✵

**लेखक :**
**पं०श्रीराम शर्मा आचार्य**

✵

प्रकाशक :

**युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट**

**गायत्री तपोभूमि, मथुरा**

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

✵

**पुनर्मुद्रित सन् २०११** **मूल्य : ७.०० रुपये**

# भूमिका

प्रसन्नता, आनंद और संतोष की प्राप्ति के लिए लोग संसार को छान डालते हैं, इधर-उधर मारे-मारे फिरते हैं, वस्तुओं के संग्रह की धूम मचा देते हैं तथा अनेक प्रकार की चेष्टाएँ करते हैं, इतने पर भी अभीष्ट वस्तु प्राप्त नहीं होती। सारे कष्ट साध्य प्रयास निरर्थक चले जाते हैं, मनुष्य प्यासे का प्यासा रह जाता है।

कारण यह है कि उल्लास का उद्‌गम अपनी आत्मा है, संसार की किसी वस्तु में वह उपलब्ध नहीं हो सकता। जब तक यह तथ्य समझ में नहीं आता, तब तक बालू से तेल निकालने की तरह आनंद प्राप्ति के प्रयास निष्फल ही रहते हैं। जब हम यह समझ लेते हैं कि आनंद का स्त्रोत अपने अंदर है और उसे अपने अंदर से ही ढूँढ़ निकालना होगा, तब सीधा रास्ता मिल जाता है।

आंतरिक सद्‌वृत्तियों को विकसित करके, आंतरिक उल्लास को किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है ? बिना भौतिक वस्तुओं का संचय किए किस प्रकार हम हर घड़ी आनंद में सरावोर रह सकते हैं ? यह तथ्य इस पुस्तक में बताया गया है। आशा है कि पाठक इससे लाभ उठावेंगे।

—पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

# आंतरिक उल्लास का विकास

## प्रेम का अमृत छिड़क कर शुष्क जीवन को सजीव बनाइए

जो भी वस्तुएँ आपके आसपास मौजूद हैं, उनमें से कुछ आपको अच्छी लगती हैं, कुछ बुरी, कुछ की ओर ध्यान भी नहीं जाता। जो अच्छी लगती हैं उनसे प्यार करते हैं, जो बुरी लगती हैं उनसे घृणा करते हैं, जो उपेक्षित हैं उनकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखते। आप चाहते हैं कि प्रिय वस्तुएँ सदा अधिक मात्रा में पास रहें, वे आपको सुख देती हैं, सुखदायक वस्तुओं की समीपता सभी को पसंद है।

आइए, अब यह विचार करें कि वस्तुओं के अच्छा लगने का क्या कारण है ? यह कहना ठीक नहीं कि गुणवान वस्तुएँ स्वभावतः प्रिय लगती हैं। यह अधूरी व्याख्या है। सच बात यह है कि जिस वस्तु में जितनी मात्रा में अपनापन-आत्मभाव, स्वार्थभाव है, वह उसी परिमाण में प्रिय लगती है, गुण रहित हो तो भी अच्छी लगती है। आपका अपना छोटा सा बालक है, वह सिर्फ रोना ही जानता है, दिन को रोता है, रात को रोकर बार-बार नींद उचटा लेता है, गोदी में लें तो मल-मूत्र से साफ कपड़ों को खराब कर देता है। उसमें एक भी गुण नहीं, दुर्गुण बहुत हैं तो भी आप उसके लिए कपड़ों की, दूध की, दवा-दारू की खर्चीली व्यवस्था करते हैं, कष्ट उठाते हैं फिर भी उसे प्यार करते हैं। कारण यह है कि उस बालक में आपका आत्मभाव है, अपनापन है। दूसरों के बच्चे यदि आपके ऊपर टट्टी कर दें तो यह बुरा लगेगा। पड़ोसी का गोरा, सलौना बच्चा, अपने काले-कलूटे बच्चे से अच्छा थोड़े ही लगेगा? यहाँ सौंदर्य या गुण की प्रमुखता नहीं है, अपनेपन का महत्त्व है।

एक मकान के आप मालिक हैं, वह बहुत अच्छा लगता है, उसकी अच्छाई की प्रशंसा करते नहीं थकते, टूट-फूट, मरम्मत, सजावट का खूब ध्यान रखते हैं, संयोगवश यह मकान बिक कर दूसरे के हाथ में चला जाता है, अब आप निश्चिंत हो गए, टूट-फूट से कोई मतलब नहीं, आज फूट जाए, चाहे हजार वर्ष खड़ा रहे। कल तक जो मकान इतना प्रिय था, आज ही उससे सारा संबंध छूट गया। इतनी शीघ्र इतनी अधिक विरक्ति का कारण क्या है? कारण यह है कि कल तक उसके साथ जो अपनापन चिपटा हुआ था, आज नहीं रहा। कल जिस रुपयों से भरी थैली को अत्यंत उत्साह से छाती से चिपटाए फिरते थे वह आज दूसरे व्यापारी के पास चली गई, यदि वे रुपए अब चोरी चले जाएँ तो आपको कुछ भी कष्ट न होगा। उन रुपयों के बदले जो माल खरीदा है वह अब प्यारा लगने लगा, कल वह माल भी पड़ोस में पड़ा था पर तब उसकी ओर आँख उठाकर भी न देखते थे, आज उसको सुरक्षित रखने के लिए चोटी का पसीना एड़ी तक बहा रहे हैं। माल वही कल था, वही आज है। अंतर केवल इतना हुआ कि कल वह पराया था, आज अपना हो गया, अपनापन ही तो अच्छा लगने का कारण है।

नित्य कई आदमी मरते हुए आप देखते हैं, मरघट में आए दिन चिताऐं जलती रहती हैं, इसका जरा भी प्रभाव नहीं होता, एक उपेक्षा भरी दृष्टि से उस शव संस्कार को देखकर अपने काम में लग जाते हैं। पर जब अपना कोई प्रियजन मरता है तब तो फूट-फूट कर रोते हैं, आँसुओं की झड़ी नहीं रुकती, दुनियाँ सूनी दीखती है, भूख-प्यास उड़ जाती है, दुःख-शोक की व्याकुलता में चारों ओर अंधेरा छा जाता है। पड़ोसी का भाई मरा था तब चेहरे पर जरा सी शिकन भी न आई थी, पर आज इतनी व्याकुलता क्यों? मरते तो सभी एक समान हैं, पर एक की मृत्यु का जरा भी शोक न हो दूसरे के लिए इतनी वेदना क्यों? कारण यह है जिस व्यक्ति में आत्मभाव सम्मिलित कर रखा था, वह प्रिय था, प्रिय के विछोह में ही तो दुःख होता है। अपने घर पुत्र पैदा हुआ तो खुशी से फूले नहीं समाते, पड़ोसी के घर बच्चा जन्मे तो कुछ प्रयोजन नहीं। यह स्वाभाविक बात है। कुछ शिकायत या भर्त्सना के रूप में यह

पंक्तियाँ नहीं लिखी जा रही हैं। हमारा प्रयोजन केवल यह बताने का है कि गुण-अवगुण के कारण ही हम वस्तुओं को प्यार नहीं करते वरन प्रमुख कारण उसमें आत्मभाव का अपने स्वार्थ का समन्वित होना है। जिससे जितना स्वार्थ है वह उतना ही अधिक प्रिय लगेगा। शोक का कारण भी यही है जिसके अभाव में अपनी जितनी क्षति मालूम पड़ेगी उसी मात्रा में उसके लिए वेदना होगी।

उपन्यास पढ़ने में वह पात्र आपको पसंद आता है जिसके साथ मन ही मन आत्मीयता की एक पतली सी डोरी बाँध लेते हैं। उस समय पर जब विपत्ति पड़ती है या सफलता पाता है, विजयी होता है तो आपका हृदय भी उसी प्रकार की भावनाओं से तरंगित हो उठता है। सिनेमा, नाटक, खेल देखने जाते हैं, जिस अभिनेता के साथ किसी कारणवश आत्मभाव का पतला तार बँध जाता है, उसकी हार-जीत, आशा-निराशा के साथ आपका मन भी तरंगित होता है। मनोरंजन दिलचस्पी भावान्दोलन का रहस्य यही है। यदि किसी अभिनेता या पात्र के साथ एकीभाव स्थापित न कर सकें तो उस खेल के देखने या उपन्यास के पढ़ने में जरा भी मजा न आवेगा। दर्शनीय स्थलों को देखकर कुछ व्यक्ति तो बहुत प्रसन्नता अनुभव करते हैं, तरंगित होते हैं, परंतु कुछ ऐसे भी होते हैं जिन पर उन दृश्यों का जरा भी प्रभाव नहीं पड़ता। कारण यह है कि उस सुंदर दर्शनीय स्थान से जो व्यक्ति एक मानसिक संबंध जोड़ता है, स्थापित करता है, उस वातावरण की अनुभूति अपने में आकर्षित करता है, उसे आनंद आता है। जो 'हमें क्या मतलब, हमको क्या लाभ' ऐसा सोचकर देखता है, उसे कुछ भी विशेषता दिखाई नहीं पड़ती। किसी अद्‌भुत दृश्य को वह कौतूहल की दृष्टि से देख तो सकता है परंतु भावुक हृदय व्यक्ति उस दृश्य से जो आनंद ग्रहण करता है, यह दूसरी ही बात है।

तत्त्वस्थिति यह है कि संसार की एक भी वस्तु न तो प्रिय है, न अप्रिय। किसी कारणवश आकर्षित होकर जब उसमें आत्मभाव जोड़ दिया जाता है तो वह प्रिय लगने लगती है। जिससे स्वार्थ का विरोध पड़ता है वह बुरी लगती है और जिससे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कुछ भी संबंध नहीं, उसके प्रति उपेक्षा रहती है। यही प्रिय और अप्रिय का दार्शनिक विवेचन है।

आप चाहते हैं कि हमारे चारों ओर प्रिय ही प्रिय तत्त्व जमा रहें तो इसका एक ही उपाय है कि आत्मभाव को उन सबसे संबंधित कर दें। सोए हुए निष्क्रिय तत्त्वों के रहते हुए भी अंधकार बना रहता है पर जैसे ही बिजली की धारा उन बल्वों तक पहुँची, वैसे ही वे क्षण भर में दीप्तमान हो उठते हैं और अपने प्रकाश से निकटवर्ती स्थानों को जगमगा देते हैं। अपने निकटवर्ती लोगों पर यदि आप आत्मीयता की भावनाएँ आरोपित कर दें तो वे सब आपको प्रिय, आनंददायक, मनोहर और प्रसन्नता बढ़ाने वाले प्रतीत होने लगेंगे। जो लोग अल्पज्ञ और अपराधी हैं वे भी कपड़ों पर मल-मूत्र त्याग देने वाले अपने बालक के समान आनंदप्रद ही लगेंगे। क्रोध, चिड़चिड़ाहट, द्वेष, घृणा की जो अग्नि शिखाएँ दिन-रात मन में जलती रहती हैं और खून सुखाती रहती हैं वे अनायास ही शांत हो जावेंगी।

प्रिय वस्तुओं का चारों ओर एकत्रित रहना यही तो स्वर्ग है। स्वर्ग की बड़ी महिमा गाई गई है, कथा-पुराणों में उसका बहुत विस्तृत वर्णन मिलता है, उस सारे वर्णन का सार यह है कि यहाँ सब प्रिय ही वस्तुएँ हैं, जैसे स्थानों में रहना चाहते हैं वह सब वहाँ मौजूद हैं। ऐसा स्वर्ग आप स्वयं बना सकते हैं, इसी जीवन में उसका आनंद लूट सकते हैं, दूर जाने की जरूरत नहीं, जिस स्थान पर रह रहे हैं, वहीं उसकी रचना हो सकती है, क्या आप सचमुच ऐसा चाहते हैं? क्या अपनी आँखों से इस जीवन में ही उस स्वर्ग की झाँकी करने के लिए सचमुच उत्सुक हैं? यदि हैं तो सच्चे हृदय से तैयार हो जाइए। अपने आत्मभाव को संकुचित मत रखिए, वरन उसे निकटवर्ती लोगों के ऊपर बिना भेद-भाव के बिखेर दीजिए। विद्युत धारा का स्पर्श करते ही अचेतन पड़े हुए बल्व जगमगाने लगते हैं, आपके आत्मभाव का स्पर्श होते ही समस्त संबंधित जन प्रेम पात्र बन जाएँगे, प्रिय लगने लगेंगे, उन प्रियजनों के बीच रहकर आप स्वर्ग जैसा आनंद अनुभव करेंगे।

संबंधित लोगों को अपना समझिए, उनमें अपनापन रखिए। इस प्रकार उनमें यदि कुछ दोष भी होंगे तो वे प्रिय रूप में दृष्टिगोचर होंगे। अपनों के लिए स्वभावतः उनके दोषों को छिपाने और गुणों को प्रकट करने की वृत्ति रहती है, अपने प्यारे पुत्र के दोषों को कौन

पिता प्रकट करता है? वह तो उसकी प्रशंसा के ही पुल बाँधता रहता है। दुर्गुणी बालक को कोई न तो मार डालता है और न जेल ही पहुँचा देता है वरन सारी शक्तियों के साथ यह प्रयत्न किया जाता है कि किसी सरल उपाय से उसके दुर्गुण दूर हो जाएँ या कम हो जाएँ। यदि ऐसी ही वृत्ति अपने परिजनों के साथ रखें तो उनके अंदर जो बुरे तत्त्व विद्यमान हैं, वे घट जाएँगे, कम-से-कम आपके लिए वे निस्तेज हो ही जाएँगे। डाकू, हत्यारे, ठग, व्यभिचारी आदि क्रूरकर्मी लोग भी अपने स्त्री, पुत्र, भाई, बहिन आदि के साथ अपने पैशाचिक स्वभावों का उपयोग नहीं करते, सिंह अपने बाल-बच्चों को नहीं फाड़ खाता, इसी प्रकार जिनके प्रति आप आत्मभाव रखते हैं वे भी कम से कम आपके लिए तो दुखदायी न रहेंगे। महात्मा इमरसन कहा करते थे कि 'यदि मुझे नरक में रखा जाए तो मैं अपने सद्गुणों के कारण वहाँ भी स्वर्ग बना लूँगा।' आप में यदि विवेक हो तो वे कुटुंबी, जिनके साथ आपका दिन-रात कलह होता है, आसानी से प्रेम पात्र बन सकते हैं।

प्रेम एक ऐसा शब्द है जो टूटे हुए हृदय को जोड़ता है, बिछुडों को मिलाता है, विद्वेष को शांत करता है, शिकायतों को दूर करता है। अपने मनोभावों को वाणी या आचरण द्वारा दूसरे पर इस प्रकार प्रकट करें जिससे उसे यह विश्वास हो जाए कि आपका आत्मभाव सच्चा है, बिना किसी खुदगर्जी या मायाचार के अपनेपन की भावना रखते हैं तो विश्वास कीजिए कि वह आपका गुलाम हो जाएगा। संघर्ष और कलह के लिए फिर गुंजाइश ही न रहेगी। दोषों से रहित व्यक्ति इस संसार में एक भी नहीं है। काम, क्रोध, लोभ, मोह की वृत्तियाँ न्यूनाधिक अंशों में हर एक के मन में बस रही हैं, किसी की एक बुराई को देखकर उस पर आग बबूला हो जाना, सब बुराइयों की खान मान लेना, घृणास्पद मानना उचित नहीं। आप निष्पक्षता के साथ तलाश करेंगे तो उसमें बुराइयाँ मिलेंगी, पर बुराइयों से अच्छाइयों की मात्रा अधिक होगी। क्या आप ऐसा नहीं कर सकते कि इन अच्छाइयों से आनंदित हों, उन्हें प्रकट करें और प्रोत्साहित करके आगे बढ़ावें? क्या आप ऐसा नहीं कर सकते कि बुराइयों को कुछ देर के लिए दर गुजर कर जाएँ, उन्हें दफना दें, घटावें और सुधारने का प्रयत्न करें? ऐसा नहीं कर सकते तो इसका

एकमात्र कारण यह है कि उस व्यक्ति के प्रति आपका सच्चा आत्मभाव नहीं है। झूँठ-मूठ किसी रिश्ते में बँध गए हैं, पर उस रिश्ते को निबाहने के लिए आपका क्या कर्त्तव्य है? इसकी बहुत ही कम जानकारी रखते हैं।

यदि रोग असाध्य हो गया है तो बात दूसरी है अन्यथा अधिकांश मनमुटाव ऐसे होते हैं जिन्हें आसानी से सुलझाया जा सकता है। दूसरे आदमी तभी तक आपसे दूर-दूर रहते हैं जब तक कि उन्हें आपकी आत्मीयता की सचाई पर विश्वास नहीं होता। जिन स्वजनों से आप बड़बड़ाते रहते हैं, क्या कभी आपने वाणी एवं आचरण द्वारा उन्हें यह विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया है कि मेरी आत्मीयता सच्ची है? इस प्रयत्न में जितने ही सफल होते हैं उनके दिलों में उतनी ही जगह अपने लिए बना लेते हैं।

यह भी मान लिया जाए कि दूसरे लोग आपके साथ उत्तम व्यवहार नहीं करते, हुक्म नहीं मानते, अदब नहीं करते तो भी यह कोई ऐसी बात नहीं है जिससे बुरा मानने या दुःखी होने की आवश्यकता पड़े। तीन-चार वर्ष का बच्चा आपके साथ कोई सलूक नहीं करता, हुक्म नही बजाता, अदब नहीं करता बल्कि बहुत बार खराब आचरण करता है तो भी उसके व्यवहार आपको बुरे नहीं मालूम होते, वरन किसी हद तक मनोरंजन ही करते हैं, फिर क्या बात है कि बड़ी उम्र के व्यक्ति के किसी प्रकार के आचरण पर अत्यंत दुःख मानते हैं? कारण यह है कि उस छोटे बालक को बड़े से बड़े अधिक चाहते हैं, अथवा जितना आत्मभाव बालक पर था, बड़े पर उससे कम रखते हैं। स्वार्थ के साथ प्रेम नहीं ठहर सकता है। बदला चाहने वाले को निराश होना पड़ता है। आप अपना कर्त्तव्य पालन करने तक ही संतुष्ट रहिए। अपनी इच्छा को इतनी सूक्ष्म रखिए, आवश्यकताओं को इतनी न्यून रखिए कि दूसरों की सहायता की जरूरत न पड़े। यदि जरूरत पड़े तो बदले में कृतज्ञता ज्ञापन, धन्यवाद, प्रशंसा द्वारा उसका कुछ बदला उसी समय चुका दीजिए और शेष को आगे-पीछे बेबाक कर देने की फिक्र में रहिए। कर्जदार बन कर अपने ऊपर दूसरे के उपकार लादने की इच्छा करना कोई गौरव की बात थोड़े ही है। बदला चाहने या कर्ज लेने की तुच्छ वृत्ति को छोड़ दें तो कोई कारण नहीं

कि अल्पबुद्धि वालों का, बड़ी उम्र के बालकों का कोई अप्रिय व्यवहार आपको दुखदायी प्रतीत हो।

"लोग क्या कहते हैं"-इस आधार पर यदि सुखी, दुःखी होने की आदत डालेंगे तो सदैव दुःख भोगना पड़ेगा क्योंकि यह संभव नहीं कि सब लोग आपकी मनमर्जी के बन जावें और वैसे ही आचारण करें जैसे कि आप चाहते हैं। "हम क्या करते हैं"-इस आधार पर यदि सुखी होने की आदत डालेंगे तो सदैव सुख ही सुख सामने पड़ेगा। क्योंकि अपने को मनमर्जी का बनाना अपने हाथ में है। इससे कौन रोक सकता है कि हम दूसरों को अपना समझें, उन्हें प्यार करें और उस प्यार एवं अपनेपन के कारण जो आनंद उपजे उसका उपयोग करें। स्वर्ग निर्माण की यही कुंजी है। अपने प्रेम भाव के कारण बहुत अंशों में दूसरों का व्यवहार नरम, मधुर, सुखकर हो जाता है। कदाचित कहीं अपवाद उपस्थित हो, किसी ऐसे जड़ से पाला पड़े जो उलटा ही उलटा चलता हो तो उसकी गतिविधियों को उपेक्षा की दृष्टि से देखिए, उसे अपनी मौत मरने दीजिए, आप तो अपने कर्त्तव्य में प्रसन्न रहिए। संसार में अनेक दुष्टात्मा भरे पड़े हैं उनके होने से आपको कुछ बड़ा भारी शोक-संताप नहीं होता, फिर क्या कारण है कि अमुक व्यक्ति के दोषों का दंड आप अपने को दें। दूसरों के बुरे विचार और कार्यों से अपने को प्रभावित मत होने दीजिए। सहनशीलता और समझौते की नीति से काम लीजिए। बदला या कर्ज चाहने की इच्छा छोड़कर विशुद्ध प्रेम का, आत्मभाव का प्रसार कीजिए, इससे आप अपने लिए एक स्वर्ग की रचना बड़ी आसानी से कर सकेंगे।

आध्यात्मिक साधना में 'अहंभाव का विस्तार करना'-यह तत्त्व प्रधान रूप में विद्यमान है। आत्मोन्नति यही तो है कि अपनेपन के दायरे को छोटे से बड़ा बनाया जाए। जिनका अपनापन केवल अपने शरीर तक ही है वे कीट-पतंग नीची श्रेणी के हैं, जो अपनी संतान तक आत्मभाव को बढ़ाते हैं वे पशु-पक्षी उनसे कुछ ऊँचे हैं, जिनका अहंकार अपनी संस्था, राष्ट्र तक है वे मनुष्य हैं, जो समस्त मानव जाति को अपनेपन से ओत-प्रोत देखते हैं, वे देवता हैं, जिनकी आत्मीयता चर-अचर तक विस्तृत है वे जीवन मुक्त परम सिद्ध हैं। जीव अणु है, छोटा है, सीमित

है। ईश्वर महान है, विभु है, व्यापक है। जब जीव ईश्वर में तद्रूप होने के लिए आगे बढ़ता है तो वह भी महानता, विभुता, व्यापकता के गुणों में समन्वित होने लगता है। जिन पर भूत चढ़ता है उनके वचन और आचरण भूत जैसे हो जाते हैं, ईश्वरीय कृपा की किरण जिन महात्माओं पर पड़ती है, उनकी स्पष्ट पहचान 'आत्मभाव का विस्तार' है। जिसका स्वार्थ जितने कम लोगों तक सीमित है वह ईश्वर से उतना ही दूर है। जो आत्मभाव का जितना विस्तार करता है, अधिक लोगों को अपना समझता है, दूसरों की सेवा सहायता करना आवश्यक कर्त्तव्य समझता है और उनके सुख-दुःख में अपना सुख-दुःख मानता है, वह ईश्वर के उतना ही निकट है। आत्मविस्तार और ईश्वर आराधन एक ही क्रिया के दो नाम हैं।

संसार से ममता को हटा देने या संसार भर में ममता का विस्तार कर देने का एक ही अर्थ है। दोनों का तात्पर्य यह है कि थोड़े ही दायरे में ममता को केंद्रीभूत न रहने दिया जाए वरन उसका उपयोग विस्तृत क्षेत्र में किया जाए। केवल अपने शरीर तक या स्त्री, संतान तक ममता का सीमित रहना पाप मूलक है। क्योंकि अन्य लोगों को विराना समझने से उनका शोषण करने की प्रवृत्ति बलवती होती है। जिससे अपना संबंध नहीं, उसकी हानि-लाभ में भी कोई दिलचस्पी नहीं रहती, ऐसी दशा में अपनों के लाभ के लिए विरानों को हानि पहुँचाने का अवसर आवे तो उसे करने में कुछ झिझक या संकोच अनुभव नहीं होता। चोर यदि यह अनुभव करे कि जिसका माल चुरा रहा हूँ, उसे जितना दुःख चोरी में मुझे होता है, उतना ही दुःख होगा तो वह चोरी कैसे कर सकेगा? हत्यारा यदि अनुभव करे कि बध करते समय मुझे जितना कष्ट होता है, उतना ही उसे भी होगा तो उसकी छुरी कैसे किसी का गला कतरने में समर्थ होगी? आत्मीयता का अभाव ही सताने और शोषण करने की छूट देता है। अपनों के लिए तो त्याग और सेवा करने की इच्छा होगी। अपनी बीमारी को दूर न करने के लिए मनमाना पैसा खरच किया जा सकता है, यदि भाई को अपना मानते हैं तो उसकी बीमारी में सहायता किए बिना न रहा जाएगा। इस प्रकार पाप और पुण्य की प्रवृत्तियाँ भी इसी अहंता को सिकोड़ने और विस्तार करने पर निर्भर

हैं। आप सदैव ही उद्योग करते रहिए कि अपना 'अहम' सीमित न रहे वरन जितना हो सके, विस्तृत किया जाए।

आत्मभाव के विस्तार की सूक्ष्म मनोवृत्ति का व्यवहार उदारता में दर्शन किया जा सकता है। जिनके विचार और कार्य उदारता पूर्ण हैं, जो दूसरे लोगों की सुविधा का अधिक ध्यान रखते हैं, वास्तव में वे इस भूलोक के देवता हैं। अभागा कंजूस सोचता है कि सारी दौलत अपने लिए जोड़-जोड़ कर रख लूँ, अपनी विद्या किसी पर न प्रकट करूँ, अपनी शक्तियों को किसी को मुफ्त न दूँ, ऐसे लोग सर्प बनकर संपदाओं की चौकीदारी करते हुए मर जाते हैं, उन्हें वह आनंद जीवन भर उपलब्ध नहीं होता जो उदारता के द्वारा मिलता है। एक उदार व्यक्ति पड़ोसी के बच्चों को खिलाकर बिना खरच के उतना ही आनंद प्राप्त कर लेता है जितना कि बहुत खरच और कष्ट के साथ अपने बालकों को खिलाने में प्राप्त किया जाता है। अपने हँसते हुए बालकों को देखकर आपकी छाती गुदगुदाने लगती है। पड़ोसी के उससे भी सुंदर फूल से हँसते हुए बालक को देखकर आपके दिल की कली क्यों नहीं खिलती? अपनी फुलवारी को देखकर खुश होते हैं, पर पास में ही जो सुरभित उद्यान लहलहाते हैं वे आप में तरंगें नहीं उत्पन्न करते? आपके आसपास अनेक सदाचारी, कर्त्तव्य परायण, मधुर स्वभाव वाले, धर्मात्मा, परोपकारी, विद्वान निवास कर रहे हैं, उनका होना आपको क्यों शांतिदायी नहीं होता? कारण यह कि आप खुद अपने हाथों अपनी एक निजी अलग दुनियाँ बसाना चाहते हैं, उसी से संबंध रखना चाहते हैं, उसी की उन्नति को देखकर प्रसन्न होना चाहते हैं, यह काम शैतान के हैं। शैतान के कार्य आनंदप्रद नहीं हो सकते।

पुराणों की कथा है कि शंकरजी ने अपनी अलग सृष्टि रची और वे सर्प, बिच्छू, भूत, पिशाच जैसे दुखदायी जंतुओं की रचना ही कर सके। एक आख्यान ऐसा है जिसके अनुसार विश्वामित्र ने भी अलग सृष्टि बसाई थी, यह रचना भी ऐसी भोंड़ी और बेहूदी रही। ईसाई धर्म में एक स्थल पर शैतान द्वारा अलग सृष्टि बनाने का वर्णन है। यह रचना उसके लिए अनेक कष्ट और विपत्तियों का कारण बनीं। आप उन दुखदायी स्मृतियों को पुनः दुहराने का प्रयत्न मत कीजिए। आपका बेटा भीम जैसा बलवान, सूर्य जैसा

तेजस्वी, वृहस्पति सा विद्वान, इंद्र सा पदारूढ़ बने तब प्रसन्नता होगी, आपकी पत्नी रति सी सुन्दर, सीता सी साध्वी, सरस्वती सी बुद्धिमान हो तब आपको प्रसन्नता होगी, ऐसी आशा करेंगे तो प्रसन्नता एक काल्पनिक वस्तु बन जाएगी जो कभी भी प्राप्त न हो सकेगी। अपनी अलग दुनियाँ मत बसाइए, आनंद को किन्हीं अमुक व्यक्तियों तक ही बंधित मत रखिए। शैतानी करतूतें छोड़िए और ईश्वर के उपासक बनिए। ईश्वर की पुण्य रचना में एक से एक उत्तम, अनूठे, मधुर रत्न भरे पड़े हैं, उनको मालिकी की दृष्टि से नहीं सरलता, सेवा और स्नेह की दृष्टि से अपना ही समझिए। ईश्वर आपका है, उसकी सुरम्य वाटिका भी विरानी नहीं है, उसे भी अपनी समझिए, दूसरों के प्रति उदार दृष्टिकोण रखिए। पराएपन को अपनेपन में बदल दीजिए। खत्ती में मुट्ठी भर जौ डाल कर आप भी साझी हो जाइए, चारों ओर आनंददायक घटना और परिस्थितियों की बाढ़ आ रही है, शीतल जल के फब्बारे छूट रहे हैं, फिर आप क्यों प्यासे खड़े हैं? दूसरों की उन्नति अपनी उन्नति समझिए और बिना खरच का आनंद मनमानी मात्रा में लूटिए।

आत्मभाव का प्रयास करिए, इससे आसपास की रूखी, उपेक्षणीय, अप्रिय वस्तुओं का रूप बिलकुल बदल जाएगा। विज्ञ लोग कहते हैं कि अमृत छिड़कने से मुर्दे जी उठते हैं। हम कहते हैं कि प्रेम की दृष्टि से अपने चारों ओर निहारिए, मुर्दे सी अस्पृश्य और अप्रिय वस्तुएँ सजीव और सजीव सर्वांग सुंदर बनकर आपके सामने आनंद नृत्य करने लगेंगी। ऐसा कहा गया है कि पारस को छूकर काला-कलूटा लोहा बहुमूल्य सोना हो जाता है। हम कहते हैं कि सच्चे प्रेम का अरूचिकर और उपेक्षणीय वस्तुओं से स्पर्श कराइए, वे कुंदन के समान जगमगाने लगेंगी। दुनियाँ आपको काटने दौड़ती है, दुर्व्यवहार करती है, सताती है, पाप अंक में धकेलती है, इसका कारण एक ही है कि आपके मन मानस में प्रेम का सरोवर सूख गया है, उसमें एकांत शून्यता की सांय-सांय बीत रही है, उसका डरावना अंदर से निकल कर बाहर आ खड़ा होता है और दुनियाँ बुरी दीखने लगती है। जब कोई व्यक्ति दुनियाँ से बिलकुल घबराया हुआ, डरा हुआ, निराश, चिढ़ा हुआ हमारे सामने आता है और संन्यासी हो जाने का विचार प्रकट करता है तब हम

उसके सिर पर हाथ फेरते हुए समझाया करते हैं कि दोस्त इस दुनियाँ में कुछ भी बुरा नहीं है, आओ अपने पीलिया का इलाज करें और संसार का उसके असली आनंददायी रूप में दर्शन करके शांति लाभ करें।

कुटिलता, अनुदारता, कंजूसी और संकीर्णता को छोड़ दीजिए। इसके स्थान पर सरलता और उदारता को विराजमान कीजिए। मुद्दतों से सूखे पड़े हुए हृदय सरोवर को प्रेम के अमृत जल से भर लीजिए। इस सरोवर में लोगों को पानी पीकर प्यास बुझाने दीजिए, स्नान करने, शांति लाभ करने दीजिए, क्रीड़ा करके आनंदित होने दीजिए। अपना प्रेम उदारतापूर्वक सबके लिए खुला रखिए। आत्मीयता की शीतल छाया में थके हुए पथिकों को विश्राम करने दीजिए। प्रेम इस भूलोक का अमृत है, आत्मभाव इस भूलोक का पारस है। इस सुर दुर्लभ मानव जीवन को सफल बनाना है तो इन दोनों महातत्त्वों को उपार्जित करने से वंचित मत रहिए।

अपने प्रेम रूपी अमृत को चारों ओर छिड़क दीजिए जिससे यह श्मशान सा भयंकर दिखाई पड़ने वाला जीवन देवी-देवताओं की क्रीड़ा भूमि बन जाए। अपने आत्मभाव रूपी पारस को कुरूप लोहा-लंगड़ से स्पर्श होने दीजिए जिससे स्वर्णमयी सुरम्य इंद्रपुरी बन कर खड़ी हो जाए। यह स्वर्ग सच्चे विश्वासियों और दृढ़ निश्चय वालों के लिए बिलकुल सरल और सुसाध्य है। यह पूर्णतः आपके हाथ में है कि इच्छा और प्रयत्न द्वारा जीवन में स्वर्ग का प्रत्यक्ष आनंद उपलब्ध करें।

## त्याग और सेवा द्वारा सच्चे प्रेम का प्रमाण दीजिए !

त्याग में कितना मिठास है, इसे बेचारे स्वार्थ परायण और कंजूस भला क्या समझेंगे? जो इस भूतल के अमर मिठास का आस्वादन करना चाहते हैं उनकी नीति होनी चाहिए—"आप लीजिए-मुझे नहीं चाहिए।" यही नीति है जिसके आधार पर सुख और शांति का होना संभव है। "मैं लूँगा, आपको न दूँगा" की नीति को अपनाकर कैकेयी ने अयोध्या को नरक बना दिया था। सारी

नगरी विलाप कर रही थी। दशरथ ने तो प्राण ही दे दिए। राजभवन मरघट की तरह शोकपूर्ण हो गया। राम जैसे निर्दोष तपस्वी को वनवास ग्रहण करना पड़ा। किंतु जब "आप लीजिए-मुझे नहीं चाहिए" की नीति व्यवहार में आई तो दूसरे ही दृश्य उपस्थित हो गए। राम ने राज्याधिकार को त्यागते हुए भरत से कहा—'बंधु! तुम्हें राज्य सुख प्राप्त हो, मुझे यह नहीं चाहिए।' सीता ने कहा—'नाथ! यह राज्यभवन मुझे नहीं चाहिए, मैं तो आपके साथ रहूँगी।' सुमित्रा ने लक्ष्मण से कहा—"**अवध तुम्हार काम कछु नाहीं। जो पै राम सिय बन जाहीं॥**" पुत्र ! जहाँ राम रहें, वहीं अयोध्या मानते हुए उनके साथ रहो। कैसा स्वर्गीय प्रसंग है। भरत ने तो इस नीति को और भी सुंदर ढंग से चरितार्थ किया। उन्होंने राज-पाट में लात मारी और भाई के चरणों से लिपट कर बालकों की तरह रोने लगे। बोले—'भाई! मुझे नहीं चाहिए, इसे तो आप ही लीजिए।' राम कहते हैं—'भरत! मेरे लिए तो वनवास ही अच्छा है। राज्य सुख तुम भोगो।' त्याग के इस सुनहरी प्रसंग में स्वर्ग छिपा हुआ है। एक परिवार के कुछ व्यक्तियों ने त्रेता को सतयुग में परिवर्तित कर दिया। सारा अवध सतयुगी रंग में रंग गया। वहाँ के सुख सौभाग्य का वर्णन करते-करते वाल्मीक और तुलसीदास अघाते नहीं है।

प्रभु ने मनुष्य को इसलिए इस पृथ्वी पर नहीं भेजा है कि एक दूसरे को लूट खाएँ और आपस में रक्त की होली खेलें। परम पिता की इच्छा है कि सब लोग प्रेमपूर्वक भाई-भाई की तरह आपस में मिल-जुल कर रहें। यह तभी हो सकता है जब त्याग की नीति को प्रधानता दी जाए, स्वार्थ की अपेक्षा परमार्थ का अधिक ध्यान रखा जाए।

आप किसी को कुछ दें या उसका किसी प्रकार का उपकार करें तो बदले में किसी प्रकार की आशा न रखें। जो कुछ आप देंगे वह हजार गुना होकर लौट आवेगा परंतु उसके लौटने की तिथि नहीं गिननी चाहिए। अपने में देने की शक्ति रखिए, देते चलिए क्योंकि देकर ही फल प्राप्त कर सकेंगे। ध्यानपूर्वक देखिए सारा विश्व आपको कुछ दे रहा है, जितने आनंददायक पदार्थ आपके पास हैं वे सब आपके ही बनाए हुए नहीं हैं, वरन वे दूसरों के द्वारा आपको प्राप्त होते हैं फिर आप दूसरों को देने में इतना संकोच क्यों

करते हैं ? आज नहीं तो कल, हँसकर नहीं तो रोकर आपको किसी दिन त्याग करना ही पड़ेगा। आप खूब इकट्ठा करते हैं, संसार की संपदाएँ अपनी मुट्ठी में बाँध लेते हैं; परंतु प्रकृति यह पसंद नहीं करती कि उसकी चलती-फिरती चीजों पर एक व्यक्ति कब्जा करके बैठ जाए, वह आपका गला दबा कर मुट्ठी खुलवा लेती है। जब आप कहते हैं कि—"नहीं मैं न दूँगा" उसी क्षण जोर की चपत पड़ती है और आप घायल हो जाते हैं। संसार में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो प्रत्येक वस्तु को देने, परित्याग करने के लिए बाध्य न हो। इस अखंड नियम के प्रतिकूल आचरण करने के लिए जो जितना ही प्रयत्न करेगा वह अपने को उतना ही दुःखी अनुभव करेगा।

शास्त्र कहते हैं कि मनुष्य जीवन में परोपकार ही सार है, हमें सदैव परोपकार में रत रहना चाहिए। किंतु यह अभिमान, दंभ या कीर्ति के लिए नहीं, आत्म कल्याण के लिए होना चाहिए। मेरे कारण दूसरों का भला हुआ यह सोचना मूर्खता है। हमारे बिना संसार का कोई कार्य अटका न रहेगा। हमारे पैदा होने से पहले संसार का सब काम ठीक-ठीक चल रहा था और हमारे बाद भी वैसा ही चलता रहेगा। परमात्मा इतना गरीब नहीं है कि हमारी मदद के बिना सृष्टि का काम न चला सके। किसी भिखारी को हमारे ही देने की कोई बड़ी भारी आवश्यकता नहीं है, वह हमारी एक रोटी के बिना भूखा न मर जाएगा।

सच पूछें तो जिसने हमें उपकार करने का अवसर दिया है, उसका कृतज्ञ होना चाहिए। हमारी उपकार बुद्धि जागृत करके वह हमें ऋणी कर देता है। इससे जो मानसिक उन्नति होती है और आत्मा को जो शक्ति प्राप्ति होती है वह दान लेने वाले को नहीं वरन देने वाले को प्राप्त होती है। दूसरों का उपकार करना मानो एक प्रकार से अपना ही कल्याण करना है। किसी को एक पैसा देकर हम भला उसका कितना भला कर सकते हैं ? किंतु उसकी अपेक्षा अपना भला हजारों गुना कर लेते हैं। हमारी उदारता का विकास न होने से संसार को रत्ती भर भी हर्ज न होगा किंतु हमारा ही आनंद स्रोत नष्ट हो जाएगा। इसलिए आप परोपकार को अपना जीवन लक्ष्य बनाइए। जितना हो सके दूसरों की भलाई

कीजिए, इसमें आपका ही भला है, आपका ही लाभ है, आपका ही कल्याण है।

त्याग करना, किसी की कुछ सहायता करना, उधार देने की एक वैज्ञानिक पद्धति है। जो कुछ हम दूसरों को देते हैं हमारी रक्षित पूँजी की तरह जमा हो जाता है। जो अपनी रोटी दूसरों को बाँट कर खाता है उसको किसी बात की कमी न रहेगी। जो अपनी संपदा को जोड़-जोड़ कर जमा करता जाता है उस पाषाण हृदय को क्या मालूम होगा कि दान में कितनी मिठास है?

''मैंने इतना प्यार दिया पर इसका बदला मुझे क्या मिला?'' ऐसे विचार करने में उतावली न कीजिए। बादलों को देखिए वे सारे संसार पर जल बरसाते फिरते हैं, किसने उसके अहसान का बदला चुका दिया? बडे-बड़े भूमि खंडों का सिंचन करके उनमें हरियाली उपजाने वाली नदियों के परिश्रम की कीमत कौन देता है? हम पृथ्वी की छाती पर जन्म भर लदे रहते हैं—और उसे मल-मूत्र से गंदी करते रहते हैं किसने उसका मुआवजा अदा किया है? वृक्षों से फल, छाया, लकड़ी पाते हैं पर उन्हें क्या कीमत देते हैं? परोपकार स्वयं ही एक बदला है। त्याग करना आपको भले ही घाटे का सौदा प्रतीत होता हो पर जब आप उपकार करने का अनुभव स्वयं करेंगे तो देखेंगे कि ईश्वरीय वरदान की तरह यह दिव्य गुण स्वयं ही कितना शांतिदायक है, हृदय को कितनी महानता प्रदान करता है। उपकारी जानता है कि मेरे कार्यों से जितना लाभ दूसरों का होता है उससे कई गुना स्वयं मेरा होता है। ज्ञानवान पुरुष जो कमाते हैं वह दूसरों को बाँट देते हैं, वे सोचते हैं कि प्रकृति जब जीवन सरीखी बहुमूल्य वस्तु मुफ्त दे रही है तो हम अपनी फालतू चीजें दूसरों को देने में कंजूसी क्यों करें? आप बुरे दिनों में और विपत्ति की घड़ियों में भी परोपकार के दिव्य गुण का परित्याग मत कीजिए। जब आप किसी को भौतिक पदार्थ देने में असमर्थ हों तो भी अपनी सद्भावनाएँ और शुभकामनाएँ दूसरों को देते रहिए।

निःस्वार्थ भावना से जीवन व्यतीत करने वाले के लिए संसार में निरुत्साह, पश्चाताप और दुःख की कोई बात नहीं है। आप जरा सी बात के आवेश में आकर लड़ने-मरने पर उतारू मत हूजिए वरन अपने विरोधियों पर दया और प्रेम की वर्षा करते रहिए।

सद्भावना से दिव्य दृष्टि मिलती है। जिसके हृदय में समस्त प्राणियों के प्रति सद्भावना भरी हुई है यथार्थ में वही दिव्य ज्ञान का अधिकारी है। मनुष्यों में देवता वह है जो पवित्र है, निःस्वार्थ है, प्रेमी है, त्याग भावी है। अपने तुच्छ शारीरिक स्वार्थों को परित्याग करने के उपरांत जो संतोष प्राप्त होता है, वह चक्रवर्ती राजा हो जाने के सुख से भी हजारों गुना अधिक है। इसलिए आप स्वार्थ को त्यागने का अभ्यास आरंभ कीजिए। ज्ञान के द्वारा अपनी पाशविक कंजूस वृत्ति को काबू में लाने का प्रयत्न करिए। तुच्छ स्वार्थों के गुलाम बनने से इंकार कर दीजिए। नम्रता, भलमनसाहत, क्षमा, दया, प्रेम और त्याग भावना को अंदर धारण करने से हृदय में शाश्वत शांति का आविर्भाव होता है। स्वार्थ रहित प्रेम के इस महान नियम में अपने को केंद्रस्थ करना मानो संतोष, शीतलता, विश्राम और ईश्वर को प्राप्त करने के मार्ग पर पदार्पण करना है।

निःसंदेह आत्मा प्रेममय है। उसे सुख अपने विषय में ही प्राप्त होता है। मछली को पानी में आनंद है, इसके अतिरिक्त और कहीं चैन नहीं। प्राणी का मन तब तक शांति लाभ नहीं कर सकता जब तक कि वह प्रेम में निमग्न न हो जाए। जब तक प्यास नहीं बुझती तब तक हम इधर-उधर भटकते हैं और जब मधुर शीतल जल भर पेट पीने को मिल जाता है तो चित्त ठिकाने आ जाता है, संतोष लाभ करके एक स्थान पर बैठ जाते हैं। सर्प का जब पेट भर जाता है तो वह अपने बिल में प्रवेश कर जाता है, बाहर घूमने की उसे कुछ जरूरत नहीं रहती। सीप समुद्र के ऊपर उतराती फिरती है, पर जब स्वांति की बूँद उसमें पड़ जाती है तो मोती को प्राप्त करके समुद्र की तली में बैठ जाती है। आत्मा प्रेम का आनंद लूटने इस भूमंडल पर आई है, अपनी प्रिय वस्तु को ढूँढ़ने के लिए इधर-उधर भटकती फिरती है। जिस दिन उसे इच्छित वस्तुएँ प्राप्त हो जाएँगी, उसी दिन तृप्ति लाभ करके अपने परमधाम को लौट जाएगी। भव भ्रमण और मुक्ति का यही धर्म है।

हमें बार-बार जन्म इसलिए धारण करना पड़ता है कि प्रेम की प्यास बुझा नहीं पाते। मोह-ममता की मृगतृष्णा में मारे-मारे फिरते हैं और भव-बंधनों में उलझते फिरते हैं। जिस दिन हमें सद्गुरु की कृपा से यह समझ आ जाएगी कि जीवन का सार प्रेम

है, उस दिन हम शाश्वत प्रेम को अपने अंत:करण में से ढूँढ़ निकालेंगे। अंत:करण में जिस दिन प्रेम भक्ति का अविरल स्रोत फूट निकलेगा, जिस दिन प्रेम गंगा में आत्मा स्नान कर लेगी, जिस दिन प्रेम का सागर हमारे चारों ओर लहरावेगा, उसी दिन आत्मा को तृप्ति मिल जाएगी और वह अपने मुक्ति धाम को लौट जाएगी।

सच्चा प्रेमी अपने सुखों की तनिक भी इच्छा नहीं करता वरन जिस पर प्रेम करता है उसके दु:ख पर अपने सुख को उत्सर्ग कर देता है। लेने का उसे ध्यान भी नहीं, देना ही एक मात्र उसका कर्त्तव्य हो जाता है। जिसके हृदय में प्रेम की ज्योति जलेगी वह गोरे चमड़े पर फिसल कर अपने चमारपन का परिचय न देगा और न व्यभिचार की कुदृष्टि रखकर अपनी आत्मा को पाप पंक में घसीटेगा। वह किसी स्त्री के रंग, चमक-दमक, हाव-भाव या स्वर कंठ पर मुग्ध नहीं होगा वरन किसी देवी में उज्ज्वल कर्त्तव्य का दर्शन करेगा तो उसको झुककर प्रणाम करेगा। प्रेमी का दम तो बेकाबू हो सकता है पर दिमाग काबू में रहेगा। वह दूसरों के सुख के लिए त्याग करने में अपने को बेकाबू पावेगा परंतु किसी को पतन के मार्ग पर घसीटने का स्मरण आते ही उसकी आत्मा कांप जाएगी। इस दशा में उसका एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। अपने प्रेम पात्र को बदनामी, पतन, दुख, भ्रम और नरक में घसीटने वाला व्यक्ति किसी भी प्रकार प्रेमी नहीं कहा जा सकता, वह तो नरक का कीड़ा है जो अपनी विषय ज्वाला में जलाने के लिए प्रेम पात्र को फँसाकर काँटों में घसीटता है।

आप प्रेमी बनना चाहते हैं, तो पवित्र प्रेम का अभ्यास पहिले अपने घर से आरंभ कीजिए। प्रेम की प्रारंभिक पाठशाला अपना घर ही हो सकता है। घर के समस्त स्त्री-पुरुषों, बालक-बालिकाओं से नि:स्वार्थ प्रेम करिए। फिर देखिए कि बदले में कितना अधिक प्रेम आपको प्राप्त होता है।

जानना चाहिए कि प्रेम का अर्थ है—त्याग और सेवा। आप घर के हर एक व्यक्ति के पक्ष में स्वार्थों को छोड़िए और जिसे जिस वस्तु की आवश्यकता है, उसे वह प्रदान कीजिए। वृद्ध आप से शारीरिक सेवा चाहते हैं, बालक आप के साथ हँसना-खेलना चाहते हैं, भाइयों को आपका आर्थिक सहयोग चाहिए, स्त्री को आपके

स्नेह पूर्ण वार्तालाप की आवश्यकता है। जो जिस वस्तु को चाहता है, उसे वह प्रदान कीजिए परंतु ध्यान रखिए प्रेम कोई व्यापार नहीं है। एक हाथ से देकर दूसरे हाथ से माँगने की नीति प्रेमी को शोभा नहीं दे सकती। वृद्धजनों से आप आशा मत करिए कि वे आपकी प्रशंसा करें ही। न भाइयों से यह चाहिए कि कमाऊ होने के नाते आपको कुछ अधिक महत्त्व दें। स्त्री यदि आपकी इच्छानुकूल सेवा-सुश्रूषा करने में असमर्थ है, तो उस पर झुंझलाएँ मत, क्योंकि आप प्रेमी बनने जा रहे हैं। प्रेमी देकर माँग नहीं सकता।

दुनियाँ में सारे झगड़ों की जड़ यह है कि हम देते कम हैं और माँगते ज्यादा हैं। हमें चाहिए यह कि दें बहुत और बदला बिलकुल न माँगे या बहुत कम पाने की आशा रखें। यह नीति ग्रहण करते ही हमारे आसपास के सारे झगड़े मिट जाते हैं। प्रेमी त्याग करता है- उसका त्याग बेकार नहीं जाता, वरन हजार गुना होकर लौट आता है। झगड़ा करने पर जितना बदला मिलता है, उससे अनेक गुना उसे बिना माँगे मिल जाता है। कदाचित कुछ कम भी मिले तो प्रेम से उत्पन्न होने वाले आंतरिक आनंद के मुकाबिले में वह कमी नगण्य है। निरंतर देते रहने का स्वभाव जिनके हृदयों में स्थान कर लेता है, वह जानते हैं कि स्वर्गीय निर्धन आत्माएँ हर्षान्दोलित करने में कितनी समर्थ हैं। त्याग की दैवी वृत्तियाँ हमारे आसपास के वातावरण को स्वर्गीय संपदाओं से भर देती हैं।

त्याग के साथ-साथ सेवा भी होनी चाहिए। जिस व्यक्ति को जिस वस्तु की आवश्यकता है, उसे वही दी जाए। कौन क्या चाहता है, इसके आधार पर यह निर्णय नहीं हो सकता कि उसे वही वस्तु मिलनी चाहिए। सन्निपात का रोगी मिठाई माँगता है, पर मिठाई देना तो उससे दुश्मनी करना है। आपका कोई प्रियजन कुमार्ग पर चलता है और उस दुष्कर्म की पूर्ति में आपको सहायक बनाना चाहता है। यदि आप उसकी सहायता करने लगें, तो यह उसके साथ एक भयंकर अपकार करना होगा। आपको सुयोग्य सिविल सर्जन की तरह यह जाँच करनी होगी कि उसे वास्तव में क्या कष्ट है और उसका उपचार किस प्रकार करना चाहिए। हैजे की बीमारी में बड़ी भारी प्यास लगती है, पर सुयोग्य डॉक्टर बीमार को मनमानी मात्रा में पानी नहीं पीने देता। हो सकता है कि रोगी उस समय डॉक्टर से

नाराज हो और उसके साथ अभद्र व्यवहार करे, पर डॉक्टर प्रेमी है, इसलिए वह तात्कालिक प्रतिक्रिया की ओर ख्याल नहीं करता और रोगी के दीर्घकालीन हित को अपने मन में रखता हुआ अपना कार्य प्रारंभ करता है।

घर के जिन लोगों की मनोभूमि में जो त्रुटि देखें, उसे दूर करने में प्रयत्नशील रहें। त्याग वृत्ति से उन्हें प्रसन्न रखने का प्रयत्न करें पर कैंची से काट-छाँट कर इन पेड़ों को सुरम्य बनाने के प्रयत्न में भी न चूकें, अन्यथा यदि उनकी कुभावनाओं को सिंचन मिलता रहा तो वे एक दिन बड़े विकृत और कंटीले झाड़ बन सकते हैं। प्रेम के दो अंगों को पूरी तरह हृदयंगम कीजिए-त्याग और सेवा, दान और सुधार। खेती को पानी की जरूरत है, पर निराई की भी कम आवश्यकता नहीं है। दोनों काम एक दूसरे से कुछ विपरीत जान पड़ते हैं, सहायता और सुधार का एक साथ मेल मिलता नहीं दीखता, यह कार्य बड़ा कठिन प्रतीत होता है, इसलिए तो प्रेम करना तलवार की धार पर चलना कहा गया है। प्रेमी को तलवार की धार पर चलना पड़ता है।

नट अपने घर के आंगन में कला खेलना सीखता है। आप अपने परिवार में प्रेम की साधना आरंभ कीजिए। शिक्षा से अपने प्रियजनों के अंत:करणों में ज्ञान की ज्योति जलाइए, उन्हें सत-असत का विवेक प्राप्त करने में सहायता दीजिए, परंतु सावधान, यह कार्य गुरु की तरह आरंभ न किया जाए, अहंकार का इसमें एक कण भी न हो। सेवा का दूध अहंकार की खटाई से फट जाएगा। अहंकार पूर्वक उपदेश करेंगे तो तिरस्कार और उपहास ही हाथ लगेगा। इसलिए जिसमें जो सुधार करना हो वह विनय पूर्वक उसे सलाह देते हुए कहिए या करिए। "धीरे-धीरे, बार-बार और सद्भावना से" ढाक को चंदन, कौए को हंस बनाया जा सकता है।

आप प्रेम की महान साधना में प्रवृत्त हो जाइए। त्याग और सेवा को अपना साधन बनाइए, आरंभ अपने घर से कीजिए। आज से ही अपनी पुरानी दुर्भावनाएँ मन के कोने-कोने से ढूँढ़कर निकालिए और उन्हें झाड़-बुहार कर दूर फेंक दीजिए। प्रेम की उदार भावनाओं से अंत:करण को परिपूर्ण कर लीजिए और सगे-संबंधियों के साथ त्याग एवं सेवा का व्यवहार करना आरंभ कर दीजिए। कुछ क्षणों

के उपरांत आप एक चमत्कार हुआ देखने लगेंगे। आपका यही छोटा सा परिवार जो आज शायद कलह-क्लेशों का घर बना हुआ है आपको सुख-शांति का स्वर्ग दीखने लगेगा। आपकी प्रेम भावनाएँ आस-पास के लोगों से टकरा कर आपके पास लौट आवेंगी और वे आनंद के भीने-भीने सुगंधित फुहार से छिड़क कर प्रेम के रंग में सरोबोर कर देंगी। प्रेम की पाठशाला का आनंद अनुभव करके ही जाना जा सकता है। विलंब मत कीजिए, आज ही आप इसमें भरती हो जाइए।

## अपने सद्‌गुणों को प्रकाश में लाइए

सद्‌गुणों की मनुष्य में कमी नहीं है, जिसे बुरा या दुर्गुणी कहते हैं वह बेशक देव श्रेणी के सुसंस्कृत मनुष्यों से सात्विक गुणों में पीछे है तो भी यथार्थ में ऐसी बात नहीं है, वह बिलकुल बुरा ही हो। निष्पक्ष रीति से यदि उसकी मनःस्थिति का परीक्षण किया जाए तो बुराइयों की ही अधिक मात्रा उसमें न मिलेगी। चौरासी लाख योनियों को पार करता हुआ जो प्राणी मुक्ति के अंतिम प्रवेश द्वार पर आ खड़ा हुआ है वह उतना घृणित नहीं हो सकता जितना कि समझा जाता है। जो विद्यार्थी एम० ए० के प्रथम वर्ष में है, कॉलेज की सर्वोच्च डिग्री प्राप्त करने में जिसे केवल एक ही वर्ष और लगाना शेष रह गया है, क्या आप उसे अशिक्षित, बेपढ़ा-लिखा कहेंगे? आवेश में चाहे जो कह सकते हैं पर शांत अवस्था में यह मानना पड़ेगा कि इतना अधिक परिश्रम करने के उपरांत इतनी कक्षाओं को उत्तीर्ण करता हुआ जो छात्र एम० ए० के प्रथम वर्ष में है वह पढ़ा है, विद्यावान है।

संभव है आप अपने को मूर्ख, दुर्गुणी अनुभव रहित, अल्पज्ञ, अशक्त या ऐसे ही अन्य दोषों से युक्त समझते हैं, दूसरे लोग जब आपका मजाक उड़ाते हैं, मूर्ख बताते हैं, विश्वास नहीं करते, नाक-भौं सिकोड़ते हैं, सहयोग नहीं करते और बार-बार यह कहते हैं कि अभागे हैं, बेवकूफ हैं। शऊर नहीं, सदा असफल ही रहेंगे, तो संभव है कि आपका मन बैठ जाता हो और सोचते हों कि इतने लोगों का कहना क्या झूँठ थोड़े ही होगा, हो सकता है कि मैं ऐसा ही होऊँ। पिछली अपनी दो-चार असफलताओं की ओर जब

ध्यान जाता होगा और उन घटनाओं को लोगों के कथन से जोड़कर देखते होंगे तो संभव है मन में यह बात और भी बैठ जाती हो कि हम अशक्त हैं, अल्प बुद्धि हैं, सद्गुणों से रहित हैं, हमें इस जीवन में कोई महत्त्वपूर्ण सफलता नहीं मिल सकती।

ऐसा भी होता है कि जब आत्मनिरीक्षण करने बैठते हैं तो विजातीय तत्त्वों पर ही पहले दृष्टि जाती है। किसी प्रीतिभोज में पौच सौ सभ्य सज्जन उपस्थित हों और उसी में दो उजड्ड शामिल हो जाएँ तो देखने वालों का ध्यान उन उजड्डों की तरफ अधिक आकर्षित होगा। उनकी बेढंगी हरकतें बहुत बुरी लगेंगी, पाँच सौ सभ्य आदमियों की सज्जनता की ओर विशेष ध्यान न जाएगा पर उन दो की करतूतें स्मृति पटल पर गहरी जम जाएँगी। प्रीतिभोज में अनेक सुस्वादिष्ट सामान हों पर हलुआ में मिर्चें गिर पड़ने से उसका स्वाद बिगड़ गया हो तो अनेक सुस्वादिष्ट भोजनों का ध्यान आपको भले ही न रहे पर उस अटपटे हलुए को न भूलेंगे। जब कभी उस प्रीतिभोज का ध्यान आवेगा, उजड्डु आदमियों की हरकतें और मिर्च पड़ा हुआ हलुआ-यह दो बातें जरूर और सबसे पहले याद आवेंगी। शायद आप उन दो ही कारणों से उस भोजन को नापसंद करें। बुराइयों की अपेक्षा अच्छाइयाँ उसमें अधिक थीं, सभ्य आगंतुकों की और स्वादिष्ट भोंजनों की संख्या अधिक थी तो भी थोड़े से विजातीय तत्त्वों का मिश्रण आपका ध्यान अधिक खींचने और बुरे निष्कर्ष पर पहुँचाने में समर्थ हो गया।

दो-चार छोटी-मोटी बुराइयाँ यदि आप में हैं तो वे विजातीय होने के कारण बार-बार आपका ध्यान खींचेंगी और पूर्ण विवेक एवं निष्पक्ष परीक्षण शक्ति की कमी रही तो संभव है आप कभी बुरे नतीजे पर पहुँच जाएँ। वे बुराइयाँ आपके ध्यान को अपने में उलझाए रहेंगी और अच्छाइयों तक दृष्टि न पहुँचने देंगी। ऐसी दशा में कोई व्यक्ति यह विश्वास कर बैठ सकता है कि मुझ में बुराइयाँ, पाप-वासनाएँ, दुर्भावनाएँ, अयोग्यताएँ अधिक हैं, इससे नीची ही स्थिति में पड़ा रहूँगा, आगे और भी नीचा हो जाऊँगा, ऊँचा चढ़ना कठिन है।

ऐस निराशापूर्ण विचार और विश्वास, भ्रम पूर्ण, एकांगी और आवेश में आकर निश्चय किए हुए होते हैं। इनमें कोई तथ्य

नहीं, इनसे कोई लाभ नहीं, यह निरर्थक विचार प्रेरक शक्ति से बिलकुल शून्य होने के कारण सर्वथा अग्राह्य हैं। हानि, पतन और झुँझलाहट की आत्मघाती, विषैली भावनाएँ इससे उपजती हैं जिससे हर प्रकार का अपकार ही अधिक होता है।

असल में मानव तत्त्व में दुर्गुणों की मात्रा इतनी नहीं है जो सद्गुणों से अधिक हो, कम से कम इतना तो निश्चित है कि जिनके हाथों में यह पुस्तक पहुँची है जिनकी आँखें इन पंक्तियों को पढ़ने में रुचि ले रही हैं वे दुर्गुण प्रधान नहीं हैं। आप अपने गुण-अवगुणों पर एक बार पुनः दृष्टिपात कीजिए, निष्पक्षता पूर्वक निरीक्षण कीजिए तो हम विश्वास दिलाते हैं कि आपको इस परिणाम पर पहुँचने के लिए विवश होना पड़ेगा कि आप में दुर्गुणों की अपेक्षा सद्गुण अधिक हैं। सचाई इसके लिए मजबूर करेगी कि अपने अंदर उच्च गुणों की अधिकता को स्वीकार करें। मनुष्य शरीर, इसमें भी शिक्षित, फिर आध्यात्मिक विषयों में दिलचस्पी, यह तीनों एक से बढ़कर एक प्रमाण हैं जो साबित करते हैं कि आप अच्छे हैं, बुद्धिमान हैं, विवेकशील हैं और ऊपर की ओर चल रहे हैं।

कुछ लोग यदि आपके बारे में अच्छे विचार नहीं रखते, आपको बुद्धिमान नहीं मानते, निरुत्साहित करने वाले वचन कहते हैं, तो उन्हें कहने दीजिए। अपने स्वतंत्र विचार रखने का हर एक को अधिकार है, परंतु यह आवश्यक नहीं कि आप हर किसी 'ऐरे-गैरे, नत्थू-खैरे', के अविवेक पूर्ण वचनों को वेद वाक्य की तरह स्वीकार करके अपने भविष्य को अंधकारपूर्ण बना लें। कहने वाले कितने ही बुद्धिमान या बड़े आदमी सही, पर यह आवश्यक नहीं कि वे जो कुछ कहते हैं बिलकुल सत्य ही कहते हैं। जब आप स्वयं अपने बारे में निर्णय करते हुए गलती करते हैं, सद्गुण प्रधान होते हुए भी अपने को दुर्गुण प्रधान मान बैठते हैं, जब आप अपने निज के बारे में इतनी बड़ी गलती कर सकते हैं तो यह बिलकुल आसान है कि दूसरे लोग जिन्हें आपको ठीक तरह से समझने का मौका नही मिला, गलती करते हों। जैसे आपने एक अच्छे प्रीतिभोज को दो उजड्डों की हरकतों और हलुआ में मिर्च पड़ जाने के कारण खराब ठहरा दिया था, वैसे ही यह भी संभव है कि दो-चार छोटी-

मोटी बाहरी, आकस्मिक घटनाओं को देखकर उन लोगों ने कोई भ्रम धारणा बना ली हो और उसी झूँठे विश्वास के कारण समय-समय पर आपकी योग्यता में अविश्वास प्रकट करते हों।

पूरी सावधानी के साथ, ठीक प्रकार छान-बीन करके किसी निर्णय पर पहुँचने की फुरसत लोगों को नहीं है, वे जल्दी में जो कुछ थोड़ा बहुत देख पाते हैं, उसी से अपनी धारण बनाते हैं। कहते हैं कि एक बार अंधों के सामने हाथी खड़ा किया गया। उन्होंने हाथी के एक दो अंगों को छुआ और अपनी अपूर्ण जानकारी के आधार पर बताया कि हाथी कैसा है ? हाथी के एक अंग को ही वे लोग पूरा समझकर उसका वैसा रूप बताते थे। भले ही वे अंधे अपने विश्वास के अनुसार सच्चे हों, पर यह आवश्यक नहीं कि उनका कथन यथार्थ ही हो। एक पैर को पकड़ कर जिसने दृढ़तापूर्वक यह कहा कि हाथी खंभे जैसा है, वह अंधा अपनी समझ से ठीक कहता है, पर आप उसकी बात मानने के लिए बाध्य नहीं हैं। प्रत्यक्ष आँखों से यदि हाथी को असली रूप में देख रहे हैं तो आपका कर्त्तव्य है कि अंधों की बात को मानने से इंकार कर दें। कोई आदमी एक विशाल भवन के पिछवाड़े होकर आया-जाया करता है, पूछने पर वह उस भवन के पृष्ठ भाग की ही व्याख्या करेगा, यदि उसने आगे का भीतर का भाग नहीं देखा है, कभी उधर गया ही नहीं है तो कैसे बता सकता है कि यह भीतर कैसा सुंदर बना हुआ है। पिछवाड़े की टूटी दीवार तक ही उस दर्शक का ज्ञान सीमित है, वह तो उन्हीं बातों को कह सकता है।

प्रसिद्ध चित्रकार पाट्रोडी कोरडोना इतना मंदबुद्धि था कि उसे 'गधे का सिर' कह कर चिढ़ाया जाता था। प्रसिद्ध गणितज्ञ सर आइजक न्यूटन अपने दर्जे में सबसे फिसड्डी लड़का था। ऐकम क्लार्क के घर वाले उसे "महामूढ़" कह कर पुकारते थे। नाट्यकार शैरीडन की माता से उसके अध्यापक ने कहा—"ऐसे जड़ बुद्धि लड़के से मैं बाज आया, इसे घर ले जाइए।" सर वाल्टर स्काट के अध्यापक ने अपना मत घोषित किया था कि 'यह लड़का जन्म भर बुद्धू रहेगा।' लार्ड क्लाइव जिसने भारत में अँग्रेजी राज्य स्थापित किया, ऐसा मूढ़ बुद्धि था कि घर वाले उससे तंग आ गए थे और

पीछा छुड़ाने के लिए सात समुन्दर पार हिन्दुस्तान को भिजवा दिया था। नैपोलियन के बचपन में कोई यह नहीं कहता था कि बड़ा होकर यह किसी काम का निकलेगा। डॉक्टर कैलमर्स और डॉक्टर कुक को उनके अध्यापकों ने स्कूल में से यह कहकर निकाल दिया था कि 'इन पत्थरों से सिर मारना बेकार है।' यह उदाहरण बताते हैं कि दूसरे लोग किसी के संबंध में जो कहते हैं वह पूर्णतः सत्य नहीं होता। आमतौर से कुछ चंद घटनाओं या बातों से प्रभावित होकर किसी के भले या बुरे होने का अनुमान लगाया जाता है। इस जल्दबाजी के निर्णय में गलती की बहुत बड़ी संभावना विद्यमान रहती है।

यदि आपको उपरोक्त महानुभावों की तरह लोगों की ओर से निराशा, भर्त्सना, उपेक्षा मिलती है, आपको बुरा या असफल कहा जाता है तो इससे तनिक भी विचलित न हूजिए, मन को जरा भी गिरने न दीजिए। सर्दी, गर्मी के घातक प्रभावों से वस्त्रों द्वारा अपनी रक्षा करते हैं, मलेरिया या हैजा के कीटाणुओं को दवा के द्वारा शरीर में से मार भगाते हैं, इसी प्रकार आत्मविश्वास द्वारा उन प्रभावों को अपने मस्तिष्क में से निकाल बाहर करिए जो आपको नीच, दुर्गुणी, असफल और मूर्ख ठहराते हैं। यह प्रभाव चाहे आपने स्वयं पैदा किया हो या किन्हीं अन्य महानुभावों ने अपनी तुच्छ बुद्धि के कारण संचरित कराया हो, जितनी जल्दी इन निराशाप्रद संक्रामक कीटाणुओं को मस्तिष्क में से मार कर भगा सकें, भगा दीजिए, क्योंकि यह आस्तीन के साँप यदि प्रत्यक्षतः दिखाई नहीं पड़ते तो भी वे आपकी सारी उन्नति के मार्ग को रोक कर भारी विघ्न-बाधा के रूप में खड़े रहते हैं।

कहने वाला कोई कितना ही बड़ा, कितना ही धनवान, कितना ही प्रतिष्ठित क्यों न हो आप यह मानने को कदापि तत्पर मत हूजिए कि आपके ऊपर बुराइयों ने कब्जा जमा लिया है, दुर्भावनाओं से ग्रसित हो गए हैं, योग्यताएँ खो बैठे हैं, पाप में डूबे हुए हैं। यह हो सकता है कि अन्य लोगों की भांति आप में भी कुछ दोष हों। यह त्रुटियाँ ऐसी नहीं है जो दूर न हो सकें। भूतकाल में कुछ ऐसे काम जरूर बन पड़े होंगे जो प्रतिष्ठा को घटाने वाले समझे जाते हों और आगे भी ऐसे अवसर बन पड़ने की संभावना है क्योंकि पूर्णता की

मंजिल क्रमशः पार होती है। फसल अपनी अवधि पर पकती है, आपको अपूर्णताएँ हटाकर पूर्णता प्राप्त करने के लिए कुछ समय चाहिए, कच्चे पारे को शुद्ध करके रसायन बना देने में वैद्य को कुछ समय लगता है, आपको भी निर्दोष मनोस्थिति तैयार करने के लिए कुछ अवकाश चाहिए, यह समय एक जन्म से अधिक भी हो सकता है। पथरीले मार्ग को पार करने में ठोकरें लगने की आशंका रहेगी ही, जिस दुर्गम पर्वत पर आप चढ़ रहे हैं, उसमें कंकड़-पत्थर बहुत पड़े हुए हैं, बहुत बार ठोकरें लगने का क्रम चलता रहेगा। यदि हर ठोकर पर वेदना प्रकट करने की नीति ग्रहण करेंगे तो यह मार्ग रुदन और पीड़ाओं से भरा हुआ, आनंद रहित हो जाएगा। इसलिए समभूमि, चट्टान, पथरीले मार्ग का हर्ष-विषाद न करते हुए प्रधान लक्ष्य की ओर आगे बढ़ते चलिए।

हमारा तात्पर्य यह नहीं कि आप भूलों, त्रुटियों और गलतियों की ओर से आँखें बंद कर लें और बार-बार उनको दुहराते चलें, आपको चाहिए कि भूलों को दूर करने और पुनरावृत्ति रोकने का भरसक प्रयत्न करें, फिर भी यदि कभी ठोकर खाकर गिर पड़ें, प्राचीन बुरे संस्कारों के खिंचाव से परास्त होकर कोई गलती कर बैठें तो उसकी विशेष चिंता न करें। सच्चा पश्चाताप यही है कि दुबारा वैसी गलती न करने का प्रण किया जाए, उपवास आदि से आत्मशुद्धि की जाए, जिसे हानि पहुँचती है उसकी या उसके समक्ष किसी दूसरे की क्षति पूर्ति कर दी जाए, मन पर जो बुरी छाप पड़ी है उसे अच्छे कार्य की छाप द्वारा हटाया जाए। साबुन से मैला कपड़ा स्वच्छ किया जाता है, भूलों का परिमार्जन, श्रेष्ठ कार्यों द्वारा करने के लिए खुला द्वार आपके सामने मौजूद है, फिर भूतकाल की अप्रिय स्मृतियों को जगा-जगा कर नित्य दुःखी होने, क्लेश उठाने से क्या प्रयोजन? यदि सदैव अपने ऊपर दोषारोपण ही करते रहेंगे, अपने को कोसते ही रहेंगे, भर्त्सना, ग्लानि और तिरष्कार में जलते रहेंगे तो अपनी बहुमूल्य योग्यताओं को खो बैठेंगे, अपनी कार्यकारिणी शक्तियों को नष्ट कर डालेंगे।

अपने को अयोग्य मत मानिए। ऐसा विश्वास मत कीजिए कि आपमें मूर्खता, दुर्भावना, कमजोरी के तत्त्व अधिक हैं। इस

प्रकार की मान्यता को मन में स्थान देना झूँठा, भ्रमपूर्ण, गिराने वाला और आत्मघाती है। यह किसी भी प्रकार नहीं माना जा सकता कि मानव शरीर के इतने ऊँचे स्थान पर चढ़ता हुआ आ पहुँचने वाला जीव अपने में बुराइयाँ अधिक भरे हुए है। यदि सचमुच ही वह नीची श्रेणी की योग्यताओं वाला होता तो किसी कीट-पतंग या पशु-पक्षी की योनि में समय बिताता होता। उन योनियों को उत्तीर्ण करके मनुष्य योनि में, विचार पूर्ण भूमिका में प्रवेश करने का अर्थ ही यह है कि मानवोचित सद्गुणों का पर्याप्त मात्रा में विकास हो गया है। भले ही आप अन्य सद्गुणी लोगों से कुछ पीछे हों पर इसी कारण अपने को पतित क्यों समझें? एक से एक आगे है, एक से एक पीछे है। इसलिए इस प्रकार तो बड़े भारी बुद्धिमान को भी मूर्ख कहा जा सकता है क्योंकि उससे भी अधिक बुद्धिमान भी तो कोई न कोई निकल ही आवेगा। आप अपने को बुद्धिमान और सद्गुणी मानें इसके लिए एक मजबूत आधार है कि बहुत से लोग आप से भी कम योग्यता वाले मौजूद हैं। जब इस दुनियाँ में आप से भी कम अच्छाइयों के मनुष्य हैं तो यह मान्यता सत्य है कि आप अधिक बुद्धिमान हैं, अधिक अच्छे हैं, अधिक धर्मनिष्ठ हैं। इस सत्य को खुले हृदय से स्वीकार करके गहरे अंतःस्थल में उतार लीजिए कि आपकी सुयोग्यता बढ़ी हुई है, आप श्रेष्ठ हैं, सक्षम हैं, उन्नतिशील हैं। चौरासी लाख बड़े-बड़े मोर्चे फतह कर चुके हैं, अंतिम मोर्चे पर विजयी होने की तैयारी कर रहे हैं, फिर छोटे-छोटे जीवन प्रसंगों का तो कहना ही क्या? छुट-पुट समस्याएँ जो प्रतिदिन स्वभावतः सामने आया ही करती हैं उनको हल कर लेना, उन पर विजय प्राप्त करना भला यह भी कोई बड़ी बात है? दस-पाँच असफलताओं के कारण खिन्न मत हूजिए, अपने बारे में गिरे हुए विचार मत रखिए, असंख्य सफलताएँ प्रतिदिन प्राप्त करते हैं, इससे भी अधिक आगे प्राप्त करेंगे। आप विजय की मूर्तिमान प्रतिमा हैं, सफलताएँ आपके लिए बनाई गई हैं। बढ़ना, उन्नति करना और विजय प्राप्त करना-इन तीन क्रियाओं से आपका भूतकाल का इतिहास भरा पड़ा है, यह क्रम आज भी जारी है और आगे भी जारी रहेगा। इस ईश्वरीय प्रयोजन पर

विश्वास करिए, आत्मा की प्रगतिशीलता पर भरोसा करिए, आप सतुगुणी हैं, उन्नतिशील हैं, सफलता के अधिकारी हैं, विजय यात्रा के लिए निर्बाध गति से आगे बढ़ रहे हैं।

आइए, अब एक पेचीदा प्रश्न पर कुछ विचार-विमर्श करें। कई व्यक्तियों में साधारण योग्यताएँ होते हुए भी उनकी कीर्ति बहुत विस्तृत होती है और कईयों में अधिक योग्यता होते हुए भी उन्हें कोई नहीं पूछता, कोई दुर्गुणी होते हुए भी श्रेष्ठ समझे जाते हैं, कोई सद्गुणी होते हुए भी बदनाम हो जाते हैं, आपने विचार किया कि इस अटपटे परिणाम का क्या कारण है? शायद आप यह कहें कि—"दुनियाँ मूर्ख है, उसे भले-बुरे की परख नहीं", तो आपका कहना न्याय संगत न होगा क्योंकि अधिकांश मामलों में उसके निर्णय ठीक होते हैं। आमतौर से भलों के प्रति भलाई और बुरों के प्रति बुराई ही फैलती है, ऐसे अटपटे निर्णय तो कभी-कभी ही होते हैं।

कारण यह कि वही वस्तुएँ चमकती हैं जो प्रकाश में आती हैं। सामने वाला भाग ही दृष्टिगोचर होता है। जो चीजें रोशनी में खुली रखी हैं वे साफ-साफ दिखाई देती हैं, हर कोई उनके अस्तित्व पर विश्वास कर सकता है, परंतु जो वस्तुएँ अंधेरे में, पर्दे के पीछे, कोठरी में बंद रखी हैं उनके बारे में हर किसी को आसानी से पता नहीं लग सकता। बहुत खोजने वाले, खासतौर से ध्यान देने वाले, तीक्ष्ण परीक्षक बुद्धि वाले लोग ही उन अप्रकट वस्तुओं के संबंध में थोड़ा-थोड़ा जान सकते हैं, सर्वसाधारण के लिए वह जानकारी सुलभ नहीं है। दुनियाँ में हर एक मनुष्य के सामने उसकी निजी परिस्थितियाँ और समस्याएँ भी पर्याप्त मात्रा में सुलझाने को पड़ी रहती हैं, सारा समय लगाकर वे ही कठिनाई से हल हो पाती हैं, इतनी फुरसत किसे है जो दूसरों को गहराई से देखकर तब उस पर कुछ मत निश्चित करे। आमतौर से यही होता है कि जो बात जिस रूप में सामने आ गई, उसे वैसे ही रूप में मान लिया गया। डॉक्टर लोग अपनी दुकानों को सजाने के लिए खाली बोतलों में रंगीन पानी भर कर रख लेते हैं, ग्राहक उन्हें दवाएँ ही समझते हैं, किसे इतनी फुरसत है कि उन बोतलों की जाँच करता फिरे कि इनमें पानी है या दवा? कोई कोई कंजूस लोग बहुत धन-दौलत जमा किए होते हैं,

बाहरी रहन-सहन के कारण उन्हें गरीब ही समझा जाता है परंतु मरने के बाद जब घड़ों भरी हुई धन-दौलत जमीन में से निकलती है तब आश्चर्य करना पड़ता है कि लोगों को जिंदगी भर इसके इतने धनी होने का भेद प्रकट न हो पाया। बहुत लोग ऐसे रहस्यमय भेद अपने अंदर छिपाए पड़े रहते हैं जिनका पता उनके सगे-संबंधियों तक को नहीं लग पाता। गुप्त पुलिस के आदमी इस विद्या में बड़े निपुण होते हैं वे अपनी असलियत का पता नहीं लगने देते और दूसरों के सगे-संबंधी बनकर ऐसे घुल-मिल जाते हैं कि बड़े-बड़े भेदों को निकाल लाते हैं।

इससे प्रकट होता है कि दूसरों को उतनी बात का पता चल पाता है जितनी आसानी से उनके सामने आ जाती है। सामने रखी हुई गेंद का अगला भाग देखा जा सकता है पर उसका पृष्ठ भाग कैसा है यह तब तक नहीं मालूम हो सकता जब तक कि उसे उलट-पलट कर न देखा जाए। सच तो यह है कि किसी वस्तु के बारे में हम बहुत ही थोड़े अंशों में जानकारी रखते हैं। अपने शरीर के भीतरी अंग किस गतिविधि से कार्य कर रहे हैं, अपने रक्त में किन रोगों के कीटाणु प्रवेश कर रहे हैं ? निजी बातों का इतना पता नहीं तो दूसरे लोगों के मनोभाव, आचरण, गुण कैसे हैं इसको ठीक-ठीक मालूम करना और भी कठिन है। दो-चार मोटी-मोटी प्रकट बातों को देखकर किसी के गुण-अवगुणों के बारे में लोग अपनी सम्मति निर्धारित करते हैं और एक से एक सुनकर दूसरा भी अपनी सहमति वैसी ही बना लेता है। दो-चार पूर्ण-अपूर्ण बातों के आधार पर ही अक्सर सारा समाज अपनी भली-बुरी धारणा बना लेता है। व्यक्ति चाहे बदल गया हो पर वह धारणा मुद्दतों तक चलती जाती है।

इन बातों को ध्यान में रखते हुए आप अपने सद्गुणों को प्रकाश में लाने का प्रयत्न कीजिए। जो अच्छाइयाँ, भलाइयाँ, योग्यताएँ, उत्तमताएँ, विशेषताएँ हैं, उन्हें छिपाया मत कीजिए वरन इस प्रकार रखा करिए जिससे वे अनायास ही लोगों की दृष्टि में आ जावें। अपने बारे में बढ़-चढ़ कर बातें करना ठीक नहीं, शेखीखोरी ठीक नहीं, अहंकार से प्रेरित होकर अपनी बड़ाई के पुल बाँधना यह भी ठीक नहीं, अच्छी बात को बुरी

तरह रखने में उसका सौंदर्य नष्ट हो जाता है। दूसरे प्रसंगों के सिलसिले में कलापूर्ण ढंग से, मधुर वाणी से इस कार्य को बड़ी सुंदरता पूर्वक किया जा सकता है। अप्रिय सत्य को प्रिय सत्य बना कर कहने में बुद्धि-कौशल की परीक्षा है, बुराई की इसमें कुछ बात नहीं। जो गाय पाँच सेर दूध देती है क्या हर्ज है यदि इस बात से दूसरे लोग भी परिचित हो जाएँ?

अपने अच्छे गुणों को प्रकट होने देने में आपका भी लाभ है और दूसरों का भी। हानि किसी की कुछ नहीं। यदि आपके सद्‌गुणों, योग्यताओं का पता दूसरों को चलता है तो उनके सामने एक आदर्श उपस्थित होता है, एक दूसरे की नकल करने की प्रथा समाज में खूब प्रचलित है, संभव है कि उन गुणों और योग्यताओं का अप्रत्यक्ष प्रभाव किन्हीं पर पड़े और वे उसकी नकल करने के प्रयास में अपना लाभ करें। सद्‌गुणी व्यक्ति के लिए स्वभावत: श्रद्धा, प्रेम और आदर की भावना उठती हैं, जिनके मन में यह उठती हैं उसे शीतल करती हैं, बल देती हैं, पुष्ट बनाती हैं। दुनियाँ में भलाई अधिक है या बुराई? इसका निर्णय करने में अक्सर लोग आसपास के व्यक्तियों को देखकर ही कुछ निष्कर्ष निकालते हैं। आपके संबंध में यदि अच्छे विचार फैले हुए हैं तो सोचने वाले को अच्छाई का पक्ष भी मजबूत मालूम देता है और वह संसार के संबंध में अच्छे विचार बनाता है एवं खुद भी भलाई पर विश्वास करके भली दुनियाँ के साथ त्याग और सेवा सत्कर्म करने को तत्पर होता है।

इसके विपरीत यदि उसके सामने लोगों के दुष्ट आचरणों का ही बहुत सा जमाव हो तो स्वभावत: वह झुँझला उठेगा, दुनियाँ को स्वार्थी, निकम्मी, धूर्त मानकर उसके साथ वैसा ही व्यवहार करने की सोचेगा, जबकि चारों ओर बुरे ही बुरे आचरण वाले लोग दीख रहे हैं तो संभव है कि सत्कर्म वाला निराश हो जाए, चिढ़कर बदला लेने, जैसे के साथ तैसा व्यवहार करने को उतारू होकर बुरे काम करने लगे। यदि आपके दुर्गुण ही उसके सामने पहुँचते हैं तो स्वभावत: घृणा, क्रोध, द्वेष, भय के भाव उसके मन में उठेंगे और वे जहाँ से उत्पन्न हुए हैं उस स्थान को भी उसी प्रकार जलावेंगे जैसे अग्नि की चिनगारी जहाँ रखी है पहले उसी स्थान को जलाना

शुरू करती है। यदि आप दुर्गुणी प्रसिद्ध हैं तो किसी न किसी कमजोर स्वभाव के आदमी पर अप्रत्यक्ष रूप से उसका असर पड़ेगा और संभव है कि नकल करने की प्रवृत्ति से प्रेरित होकर वह उन दुर्गुणों को अपनाने लगे। यह तो बिलकुल साधारण बात है कि आपके मित्र लोग उन दुर्गुणों को तरह देकर आपसे स्नेह संबंध कायम रखेंगे, बुराई को तरह देने की आदत धीरे-धीरे संस्कार का रूप धारण करेगी और फिर उस बुराई या उससे मिलती-जुलती अन्य बुराई को बिना घृणा या क्रोध किए सहन करने की आदत मजबूत हो जाएगी। पाप को तरह देना, अर्द्ध, रूप से उसमें सम्मिलित होना ही है।

ध्यानपूर्वक विचार करके देखिए यदि आप अपने को दुर्गुणी प्रकाशित करते हैं, लोगों में अपनी अयोग्यताएँ फैलाते हैं तो इसका अर्थ यह है कि उनके साथ अपकार करते हैं। दोष जान लेने से किसी का कोई फायदा नहीं वरन हानि बहुत हुई। यह समझना भ्रम है कि दोष प्रकट हो जाने से लोग सावधान रहेंगे। सच बात यह है कि बुद्धिमान आदमी दुर्गुणी और सद्गुणी किसी से धोखा नहीं खाएगा। मूर्ख को ईश्वर से भी धोखा होने का डर है। कई मूर्ख महात्मा गाँधी सरीखे प्रातः स्मरणीय महात्मा को गालियाँ देते हुए कहते हैं कि उनके कारण हमारी अमुक हानि हुई। ईश्वर पर अनुचित भरोसा करने वाले भी हानि उठाते हैं। निश्चय ही अपने को दुर्गुणी, अयोग्य या बुरे रूप में प्रकट होने देना, सचमुच बुरा होने की अपेक्षा भी बहुत बुरा है। इसमें अपनी हानि से भी अधिक दूसरों की हानि है।

यह मानी हुई बात है कि संसार के अन्य समस्त मनुष्यों की भाँति न्यूनाधिक मात्रा में आप में भी कोई छोटे-बड़े दोष होंगे ही, पर वे एक दिन बिलकुल दूर होकर रहेंगे, पर जब तक फसल पकने की प्रतीक्षा है तब तक उन्हें इस प्रकार रखिए कि किसी के लिए हानिकर परिणाम उपस्थित न करें। शरीर में मल-मूत्र की गंदी इंद्रियाँ मौजूद हैं, इन्हें ढक कर रखने का नियम चला आता है। अपान वायु सभी कोई त्यागते हैं पर सभ्यता का तकाजा है कि जरा धीरे से उस वायु को निकालने देना चाहिए ताकि उसका शब्द दूसरों के चित्त में घृणा उत्पन्न न करे। फोड़े पर पट्टी बँधी रहने

देते हैं ताकि सड़ा हुआ मवाद और विकृत घाव देखने वालों को नाक-भौं सिकोड़ने का अवसर न दे। गंदी नालियाँ ढक कर रखी जाती हैं, शौचालय खुले हुए नहीं रखे जाते। जिधर भी दृष्टि डालिए इस सर्वमान्य नियम की प्रमुखता पावेंगे कि 'बुराई को प्रकाशित मत करो वरन उसे ढक कर रखो।' इस नियम का अपने चरित्र और विचारों का प्रकटीकरण करते हुए भी ध्यान रखा करें तो निःसंदेह जन समाज का एक बड़ा भारी उपकार करेंगे। इस प्रकार बुराई का प्रभाव कम होगा वह छूत की बीमारी की तरह उड़-उड़कर चारों ओर न फैलने पावेगी। स्वस्थ स्थानों में अस्वस्थता उत्पन्न न करेगी।

'गंदगी को ढक दो और दफना दो' इस डॉक्टरी नियम का जीवन क्षेत्र में भी प्रयोग कीजिए और त्रुटिपूर्ण प्रसंगों को वीर्यपात की तरह गुप्त रखिए। दुनियाँ आपसे सौंदर्य की, सत की, प्रमोद की, प्रफुल्लता की, प्रोत्साहन की आशा करती है, आप उसे वही दीजिए। अल्प बुद्धि के दुकानदार को देखिए वह अपना अच्छा-अच्छा माल कैसे सुंदर ढंग से सजाकर आगे रखता है ताकि देखने वालों को प्रसन्नता हो। रास्ता चलते व्यक्ति को भले ही उस दुकान से कुछ खरीदना न हो पर उस सजावट से नेत्रों को तृप्त करता है और मन ही मन प्रसन्न होता जाता है। आप अपने को उस दुकानदार से अधिक बुद्धिमान समझते हैं तो अपने सद्गुणों को दुनियाँ की दुकान में इस प्रकार सजावट के साथ रखिए कि देखने वाले उसके सौंदर्य से कुछ आनंद अनुभव करते जावें। अपने कमरे को सजाकर रखने में आप कुशल हैं, त्यौहार और उत्सवों के अवसर पर शरीर और घरों की अच्छी सजधज करना खूब जानते हैं, फिर क्या ऐसा नहीं कर सकते कि अपनी उत्तमताओं को कलापूर्ण ढंग से सजाकर एक मनमोहक चित्रशाला बना दें और विश्व सौंदर्य में एक और मात्रा जोड़ देने का यश ग्रहण करें।

हम कहते हैं कि आप झूँठी झिझक, झूँठा संकोच, झूँठी नम्रता को छोड़ दीजिए। यह विनय का बहुत ही वीभत्स रूप है कि अपने को दीन, रोगी, अयोग्य कह कर सुनने वाले को यह जताया जाए कि हम नम्र हैं। आप सचमुच ही बहुत अधिक मात्रा में उत्तम, भले

एवं सुयोग्य हैं, अपनी अच्छाइयों को प्रकाश में लाइए, दूसरों को उन्हें जानने दीजिए, उत्तमता को प्रकट होने दीजिए। इससे आपको सन्मार्ग पर चलने में प्रोत्साहन, प्रगति और प्रकाश की प्राप्ति होगी। आदर, प्रतिष्ठा और श्रद्धा के भाजन बनने से आपका अंतःकरण ऊर्ध्वमुखी होकर परमार्थ की ओर अग्रसर होगा।

## प्रशंसा का मिठास चखिए और दूसरों को चखाइए

अपनी मनुष्यता को उत्तमोत्तम सद्गुणों से सुसज्जित करने के लिए यह आवश्यक है कि उन विशेषताओं को अपने में क्रियात्मक रूप से धारण किया जाए। सद्ज्ञानमयी पुस्तकें पढ़ने से, सदुपदेश सुनने से, सत्संग करने से विचारधारा परिमार्जित होती है, यह समझ में आता है कि सन्मार्ग पर चलना चाहिए। परंतु यदि वे विचार, कार्य रूप में परिणत न हों, मनोभावों का आचरण के साथ समन्वय न हो तो उस जानकारी से कुछ लाभ नहीं। वैसे तो हर कोई जानता है कि अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह बहुत धर्म कार्य हैं, अनेक ग्रंथों में इनकी महिमा सविस्तार गाई गई है। आप उपरोक्त धर्म लक्षणों को जानते हैं या अमुक पुस्तक को बार-बार पाठ करके इनकी उपयोगिता को दुहराते हैं परंतु इतने मात्र से कुछ लाभ नहीं हो सकता, जब तक कि उनको कार्य रूप में प्रयोग करना आरंभ न किया जाए। सत्संग, स्वाध्याय, कथा श्रवण का महात्म्य इसलिए है कि इनके द्वारा उत्तम आचरण की प्रेरणा मिलती है। यदि वह उद्देश्य सफल न हो, ज्ञान का कर्म के साथ मेल न हो पावे तो कागज के हाथी की तरह वह निरर्थक है। केवल जानकारी होने मात्र से कुछ विशेष लाभ नहीं होता।

अनेक सद्गुणों की रचना का प्रयोजन यह है कि लोग इनकी सहायता से अपने आचरण को उत्तम बनावें। यदि आप अनेक शास्त्र पढ़ लेते हैं, असाधारण ज्ञान संपादन कर लेते हैं किंतु उसको काम में नहीं लाते तो सोने से लदे हुए गधे का उदाहरण उपस्थित करते हैं। गधे की पीठ पर बहुमूल्य सोना लदा है पर वह स्वयं उससे कोई अच्छा पदार्थ नहीं खरीद सकता, अपनी पद वृद्धि नहीं कर सकता, वह सोना उसके लिए भार रूप है, जब तक लदा है

तब तक बोझ से और अपने को दबाए हुए है। आपका बढ़ा-चढ़ा ज्ञान दूसरे लोगों को मनोरंजन का साधन हो सकता है पर यदि उस पर अमल नहीं करते तो आपके निजी लाभ का उससे कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। गणेशजी को पीठ पर लादे फिरने वाला चूहा आखिर चूहा ही रहेगा। ज्ञान की मूर्तिमान पयोनिधि को अपने अत्यंत समीप रखने पर भी उस बेचारे चूहे को विद्या से उत्पन्न होने वाला कोई सुख थोड़े ही प्राप्त होता है।

आपने अनेक उत्तम पुस्तकों का स्वाध्याय करके एवं अनेक सुयोग्य व्यक्तियों के समीप रहकर बहुत सारा ज्ञान एकत्रित कर लिया है। हम समझते हैं कि जितना आप जानते हैं उसका एक चौथाई भाग भी क्रिया रूप में ले आवें तो इस जीवन को सब दृष्टियों से सफल बना सकते हैं। इसके विपरीत आप ज्ञान का भंडार जमा करते जावें और आचरण वैसे ही निम्न कोटि के रखें तो आप में और एक साधारण अशिक्षित व्यक्ति में क्या अंतर रहेगा?

कोरे कागज पर काली स्याही के अक्षर छपाकर इस माध्यम द्वारा हम अपने हृदयगत भावों को आपकी अंतःचेतना में उड़ेलने का प्रयत्न कर रहे हैं। हमारा लिखना और आपका पढ़ना निःस्सार है यदि किसी कर्म प्रवृत्ति के लिए इससे प्रेरणा न मिले। आज इस पुस्तक को साक्षी बनाकर हम—आप हृदय से हृदय का वार्तालाप कर रहे हैं। आपके विचार इस समय एकांत की शांति में हैं, इस अवसर पर हम अपनी समस्त सद्भावनाओं को एकत्रित करके, आपके सच्चे हित चिंतन से प्रेरित होकर, घुटने टेक कर विनयपूर्वक यह प्रार्थना कर रहे हैं कि बंधु जीवन की अमूल्य घड़ियों का महत्त्व समझो, सुर दुर्लभ मानव जीवन को यों ही बर्बाद मत करो, नरक की यातना में मत तपो, यह बिलकुल आपके हाथ की बात है कि आज के अव्यस्थित जीवन को स्वर्गीय आनंद से परिपूर्ण बना लें। पिछले दिनों आपसे गलतियाँ हो चुकी हैं इसके लिए न तो लज्जित होने की जरूरत है और न दुःखी या निराश होने की। सच्चा पश्चाताप यह है कि गलती की पुनरावृत्ति न होने दी जाए। बुरे भूतकाल को यदि आप नापसंद करते हैं और अच्छे भविष्य की आशा करते हैं तो वर्तमान काल

का सुव्यवस्थित रीति से निर्माण करना आरंभ कर दीजिए। वह शुभ मुहूर्त आज ही है, अब ही है, इसी क्षण ही है जबकि आपको अपने चिर संचित सद्ज्ञान को कार्य रूप में लाना चाहिए। अब आप इसके लिए तत्पर हो जाइए कि उत्तम श्रेणी का, उच्चकोटि का, सद्गुणों से परिपूर्ण जीवन बिताते हुए इस लोक और परलोक में दिव्य आनंद का उपभोग करेंगे।

सात्विक जीवन में प्रवेश पाने के लिए आप अच्छे गुणों को अपने में धारण करने का प्रयत्न आरंभ कर दीजिए। विनय, नम्रता, मुस्कराहट, प्रसन्नता, मधुर भाषण, प्रेमभाव, आत्मीयता-यह सब प्रशंसनीय गुण हैं, यदि आपके भीतर पुराने दुर्भावों के संचित संस्कार भरे हुए हैं और वे मन ही मन झुँझलाहट, क्रोध, स्वार्थ जैसी निम्नकोटि की आदतों को भड़काते रहते हैं तो हताश मत हूजिए, बाहरी मन से ही सही, बनावट से ही सही, इन गुणों को नकली तौर से प्रकट करना आरंभ कीजिए। मन में चिड़चिड़ाहट हो भीतर ही भीतर क्रोध आ रहा हो, इतने में कोई बाहर का आदमी आता है तो आप भीतर की वृत्तियों को बदल दीजिए और चेहरे पर प्रसन्नता की रेखाएँ प्रकट करिए, मुस्कराइए और हँसते हुए उसका अभिवादन कीजिए। किसी अन्य कारण से क्रोध आ रहा है तो भी मधुर भाषण करिए, नाराजी को दबा दीजिए। यदि किसी के प्रति प्रेम या आत्मीयता की न्यूनता है तो भी उसे कुछ बढ़ा कर प्रकट करने का प्रयत्न करिए। मन में बसने वाले दुर्भावों को दबा कर उनके स्थान पर सद्भावों को जरा बढ़ा-चढ़ा कर प्रकट करने का अभ्यास आरंभ कीजिए। अभ्यास से किसी काम में सफलता मिलती है। जो गुण सोए हुए पड़े हैं, उन्हें जगाने के लिए बनावटी सहारा लगाने की आवश्यकता पड़े तो वैसा करना चाहिए। छोटे बालक को खड़ा होना और चलना सिखाने के लिए लकड़ी की गाड़ी का सहारा दिया जाता है या उँगली पकड़ कर चलाया जाता है। निस्संदेह यह बनावटी सहायता है, इसकी तुलना अपने आप दौड़ने वाले बालक की सफलता से नहीं हो सकती तो भी अपने समय पर वह भी आवश्यक है।

सोते हुए व्यक्ति को जगाना आवश्यक हो तो उसे हाथ पकड़ कर बिठाया जाता है और जब तक नींद खुल न जाए तब तक उसे

सहारा देना पड़ता है। ठीक यही स्थिति आपको अपने सद्गुणों को जगाने में सामने आवेगी। कुछ दिनों तक ऐसा अभ्यास करना पड़ेगा कि इच्छा न रहते हुए भी मधुर, रुचिकर और प्रेम पूर्ण व्यवहार करें। यदि किसी को हानि पहुँचाने, ठगने, धोखा देने की इच्छा से कोई बनावटी व्यवहार करते हैं तब तो वह अधर्म है, किंतु निःस्वार्थ भाव से, हित कामना से, दूसरे की हृदय की कली को खिलाने की इच्छा से, अपने सद्गुण को उन्नत करने की आकांक्षा से बनावटी व्यवहार करते हैं तो वह निर्दोष है। लंगड़ा आदमी नकली टांग लगाकर अपना काम चलाता है तो इसमें किसी का कुछ भी अहित नहीं होता, बिना टांग के रहने की अपेक्षा नकली टांग लगवा लेना कोई बुरी बात नहीं है।

इस प्रतीक्षा में बैठे रहना ठीक नहीं है कि जब हमारा हृदय सात्विक प्रेम से परिपूर्ण हो जाएगा, प्राणिमात्र के प्रति आत्मभाव प्रवाहित होने लगेगा, हृदय में प्रसन्नता और उल्लास की तरंगें उठने लगेंगी तभी उनको प्रकट करना आरंभ करेंगे। यह तो ऐसी बात है जैसे कोई कहे कि पानी में पैर तब दूँगा जब तैरने की विद्या में निपुण हो जाऊँगा। तैरना तब आता है जब अनेक बार असफल प्रयत्न कर लिए जाते हैं, अभ्यास न होते हुए भी उलटे-सीधे हाथ-पैर फैंके जाते हैं, कुछ समय बाद अभ्यास परिपक्व हो जाता है और सफलता निकट आती है। विद्यार्थी पहले गलत-सलत लिखता है फिर ठीक-ठाक लिखने लगता है। अध्यापक की खींची हुई रेखाओं के ऊपर कलम फेर कर बालक अक्षरों को लिखता है पीछे बिना सहायता के स्वयं उन्हें बनाने लगता है। आपको अपने सद्गुणों की वृद्धि में भी इसी परिपाटी से काम लेना पड़ेगा। हृदय का सद्गुणों से परिपूर्ण हो जाना अंतिम सफलता है, यह एक दिन में प्राप्त नहीं होती वरन एक या एक से अधिक जन्मों का भी समय इसमें लग सकता है। साधना काल में बार-बार गिर पड़ने, फिर उठ कर चलने का क्रम जारी रहेगा। कई बार भूलें होंगी, कई बार संभलेंगे, प्रतिज्ञाएँ करेगें, प्राचीन संस्कारों के प्रबल झकझोरों से वे टूटेंगी, फिर संभलेंगे, फिर गिरेंगे। हर एक साधक अनेक बार असफल होता है, गिरता पड़ता लगा रहता है तो एक दिन लक्ष्य तक पहुँच ही जाता है।

आप असली-नकली के वितंडाबाद में पड़ कर बेकार ही बहस मत कीजिए। हम कहते हैं कि आप सद्गणों को बनावटी रूप से ही सही पर प्रकट करने की आदत डालिए, इससे हानि किसी की नहीं और लाभ सबका है। अपने को सद्गुणी घोषित करिए, अपने को अच्छे काम करने वाला, अच्छे विचार रखने वाला प्रकट होने दीजिए। अपनी अच्छाइयों को प्रकाश में आने दीजिए। अत्यंत सुगंधित, नयनाभिराम पुष्प यदि अज्ञात वन में खिलें तो उसकी शोभा सुगंधि का लाभ कोई न उठा सकेगा, वह स्वयं भी देवता के चरणों पर चढ़ने का सौभाग्य प्राप्त न कर सकेगा। आप में बहुत सी अच्छाइयों हों और लोग उससे परिचित न होने के कारण कुछ लाभ न उठा सकें तो उन अच्छाइयों का क्या महत्त्व रहा? अज्ञात स्थान में छिपकर पड़ा हुआ शीतल जल कूप किसके काम का? जबकि अनेक जीव-जंतु पानी की खोज के लिए सूखे कंठ को लेकर इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे हैं।

प्यासों की प्यास न बुझी, उधर बिना खींचे कुए का पानी सड़ गया, यह अज्ञातवास किसके लिए क्या लाभदायक हुआ? आप दीपक के अनुयायी बनिए। छदाम के मिट्टी के सकोरे में एक पैसे का तेल भरा हुआ है, एक दमड़ी की रुई, कुल मिला कर सवा पैसे का सामान है। वह इस बात की लज्जा नहीं करता कि मैं सवा पैसे की पूँजी वाला होकर सिर उठाकर क्यों चमकूँ। वह टुच्चा नहीं है इसलिए टुच्चे विचार भी नहीं करता। सवा पैसे का दीपक सिर उठा कर अपना प्रकाश फैलाता है उसके उजाले में बड़े-बडे धनी, विद्वान अपना काम चलाते हैं।

सदाचार, ईमानदारी, सेवाभाव, प्रेम, आत्मीयता, निःस्वार्थता, कर्त्तव्य परायणता, नम्रता, दया, गुणग्राहकता किसी हद तक आप में कम हैं तो भी इतना तो निश्चय है कि इनका बहुत अंशों में अस्तित्व मौजूद है। आप कहते हैं हम इन गुणों से परिपूर्ण नहीं हैं आपका कथन ठीक है, पर यह भी झूठा नहीं कि बहुत बड़ी मात्रा में आप में गुण विद्यमान हैं और वह दिन प्रतिदिन उन्नत होते चले जा रहे हैं। जैसे-जैसे इन गुणों का प्रकटीकरण होता जाएगा, वैसे ही वैसे यह योग्यताएँ और अधिक उन्नति करती जाएँगी। जीवन की दसों दिशाओं में उन्नत बनाने वाले इन गुणों

को बढ़ाने का आज से ही प्रयत्न आरंभ कर दीजिए और यह आरंभ इस प्रकार होना चाहिए कि आप स्वयं दृढ़तापूर्वक निश्चयात्मक बुद्धि से यह भावना हृदयंगम करें कि "हमारे अंदर अच्छे गुण पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं और वे प्रतिदिन आगे की ओर उन्नति कर रहे हैं।" इस भावना को इतना दृढ़ीभूत कीजिए कि संदेह संकल्प-विकल्प, विश्वास-अविश्वास, उधेड़बुन की कोई गुंजायश ही न रहे। अपने दुर्गुणों को पूर्णतया भूल जाइए। उन्हें इस प्रकार विस्मरण कर दीजिए मानो पहले भी कभी आपके निकट उनका अस्तित्व न रहा हो। इसे भूल जाने में ही दुर्गुणों के निवारण का सारा रहस्य छिपा हुआ है।

भूत उन्हें सताते हैं जो अपने निकट भूतों का अस्तित्व स्वीकार करते हैं, हर बार उनका विचार करते हैं, डरते हैं और उन्हें बुलाने की क्रियाओं में लगे रहते हैं। जो लोग भूतों को नहीं मानते, कभी उनका सोच-विचार नहीं करते उनके पास भूत की फेरी नहीं लगती। वे नहीं जानते कि भूत किस प्रकार सताते हैं। कारण यह कि जिस वस्तु का बार-बार ध्यान किया जाता है, वह वहाँ हो या न हो, मानसिक आकर्षण के कारण कहीं न कहीं से खिंचकर चली आती है। यदि उसका अस्तित्व न हो तो मानसिक संवेग के कारण उत्पन्न हो जाती है। इसी प्रकार यदि आप में दोष-दुर्गुण न हों किंतु उनके होने का अनुमान करते रहें तो न होते हुए भी उनका आविर्भाव हो जाता है जैसे कल्पना और भय के कारण भूत उपज खड़े होते हैं। यदि आप अपने को कुटिल, खलकामी बनाते हैं, नाना प्रकार के दुर्गुणों का अपने ऊपर आरोप करते हैं तो निश्चय ही वे दृष्टिगोचर होने लगेंगे। यदि उनके कुछ बीजांकुर होंगे तो वे बढ़ेंगे और न होंगे तो उत्पन्न हो जाएँगे। इसलिए यदि आप बुराइयों से छुटकारा पाना चाहते हैं तो उन्हें भुला देने का प्रयत्न कीजिए, पिछली गलती के लिए बार-बार दुःखी होना, रह-रहकर उसे स्मरण करना व्यर्थ है। इससे लाभ कुछ न होगा, हानि की गतिविधि बढ़ जाएगी।

अपने दोषों की ओर से आँखें बंद करके उन्हें बढ़ने दें या आत्मनिरीक्षण करना छोड़ दें, ऐसा हमारा कथन नहीं है। हमारा निवेदन इतना ही है कि बुराइयों को भुला कर अच्छाइयों को

प्रोत्साहित करिए। अपने में जो दोष हैं, जो दुर्भाव हैं उन्हें ध्यानपूर्वक देखिए और उनको कठोर परीक्षक की तरह तीव्र दृष्टि से जाँचते-ढूँढ़ते रहिए। जो त्रुटियाँ दिखाई पड़ें उनके विरोधी सद्गुणों को प्रोत्साहन देना आरंभ करिए, यही उन दोषों के निवारण का सही तरीका है। मान लीजिए कि आपको क्रोध अधिक आता है तो उसकी चिंता छोड़ कर प्रसन्नता का, मधुर भाषण का अभ्यास कीजिए, क्रोध अपने आप दूर हो जाएगा। यदि क्रोध का ही विचार करते रहेंगे तो विनयशीलता का अभ्यास न हो सकेगा। यदि कोई आपको आदेश करे कि भजन करते समय बंदर का ध्यान मत आने देना, तो बंदर का ध्यान आए बिना न रहेगा। वैसे भजन करने में कभी बंदर का ध्यान नहीं आता पर निषेध किया जाए तो बढ़ोत्तरी होगी। बुराई कोई स्वतंत्र वस्तु नहीं है, भलाई के अभाव को बुराई कहते हैं, पाप कोई स्वतंत्र वस्तु नहीं है, पुण्य के अभाव को पाप कहते हैं। यदि भलाई की ओर, पुण्य की ओर आपकी प्रवृत्ति हो तो बुराई अपने आप घटने लगेगी और एक दिन उसका पूर्णतः लोभ हो जाएगा।

पीठ थपथपाने में घोड़ा खुश होता है, गरदन खुजाने से गाय प्रसन्न होती है, हाथ फिराने से कुत्ता हर्ष प्रकट करता है, प्रशंसा से मनुष्य हृदय हुलस आता है। आप दूसरों की प्रशंसा करने में कंजूसी मत किया कीजिए, जिनमें जो अच्छे गुण देखें, उनकी मुक्त कंठ से सराहना किया करें, सफलता पर बधाई देने के अवसरों को हाथ से न जाने दिया करें। इसकी आदत डालना घर से आरंभ करें अपने भाई-बहिनों, बालक-बालिकाओं की अच्छाइयों को उनके सामने कहा कीजिए। अपनी पत्नी के रूप, सेवाभाव, परिश्रम, आत्मत्याग की भूरि-भूरि प्रशंसा किया कीजिए। बड़ों के प्रति प्रशंसा प्रकट करने का रूप कृतज्ञता है। उनके द्वारा जो सहायता प्राप्त होती है उसके लिए कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए। किसी ने आपके ऊपर अहसान किया हो तो शुक्रिया, धन्यवाद, मैं आपका ऋणी हूँ आदि शब्दों के द्वारा थोड़ा-बहुत प्रत्युपकार उसी समय चुका दिया कीजिए। बाद में आप देखेंगे कि चारों ओर कितना मिठास बरसता है। शत्रु-मित्र बन जाते हैं। आपकी वाणी के प्रशंसा युक्त मिठास से आकर्षित होकर मित्र

और प्रिय पात्रों का दल आपके पीछे-पीछे लगा फिरेगा। आज यह बातें छोटी भूलें ही प्रतीत होती हैं परंतु अनुभव के पश्चात आप पावेंगे कि प्रशंसा परायणता में जितना आध्यात्मिक लाभ है, उससे भी अधिक भौतिक लाभ है। धनी बनने, प्रेम पात्र बनने, नेता बनने, शत्रु रहित बनने की यह कुंजी है। दूसरों का हृदय जीतने की यह अचूक दवा है।

आप अपने में अच्छाइयाँ देखिए, दूसरों में अच्छाइयाँ देखिए, इस संसार में श्रेष्ठताएँ, उत्कृष्टताएँ, दैवी संपदाएँ कम नहीं हैं। आप उन्हें ध्यानपूर्वक देखिए, रूचिपूर्वक पहिचानिए और आग्रह पूर्वक ग्रहण करिए, ऐसा करने से आपके अंदर-बाहर, चारों ओर अच्छाइयों से भरा हुआ प्रसन्नतापूर्ण वातावरण एकत्रित हो जाएगा। इस वातावरण में आपको आनंद का, उल्लास का दर्शन होगा।

आनंददायक, उल्लास प्रदान करने वाली परिस्थितियाँ, वस्तुएँ बाहर नहीं हैं। जड़ भूतों में, चैतन्य आत्मा को उल्लसित करने वाली कोई शक्ति नहीं है। आप बाहर की ओर देखना छोड़ कर अपने अंत:करण को तलाश कीजिए। क्योंकि अखंड आनंद का अक्षय स्रोत वहीं छिपा हुआ है। अपने सत् तत्त्वों को जागृत कीजिए, उन्हें विकसित और समुन्नत कीजिए, आपका जीवन उल्लास से परिपूर्ण हो जावेगा।

■

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा